• वर्ष ६५ • अंक १९ • मूल्य ₹२०

अक्टूबर (प्रथम) २०२३

पाक्षिक

परोपकारी

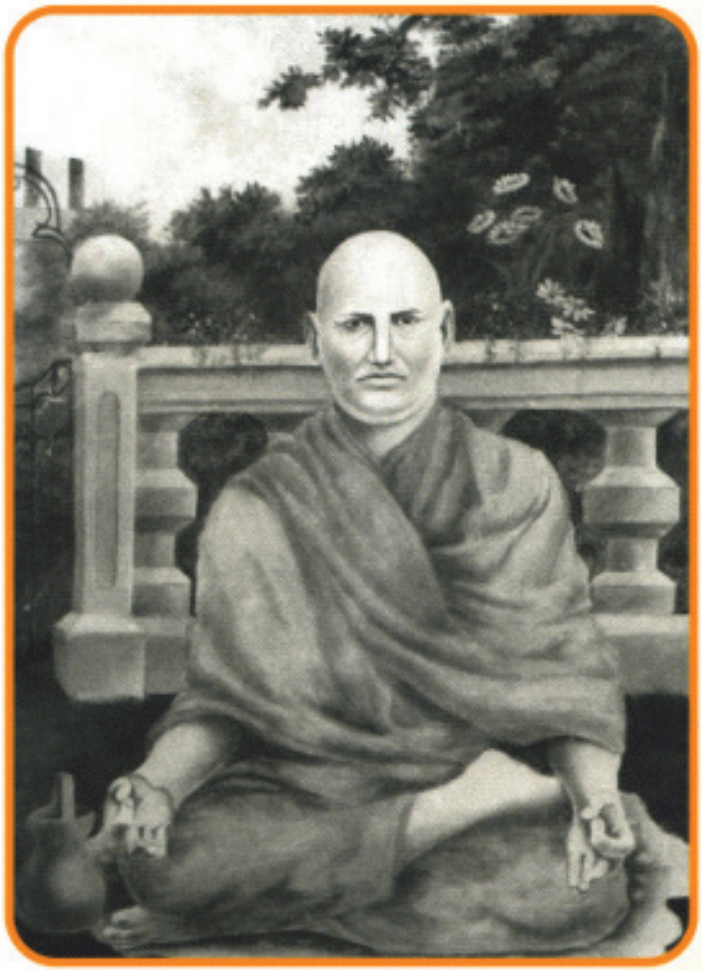

महर्षि दयानन्द सरस्वती

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द गुरुकुल आश्रम - जमानी, इटारसी (म.प्र.) में कृष्ण जन्माष्टमी पर आचार्य सत्यप्रिय के सान्निध्य में आयोजित यज्ञ- सत्संग के दृश्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६५ अंक : १९

दयानन्दाब्द: १९९

विक्रम संवत् - आश्विन कृष्ण २०८०

कलि संवत् - ५१२४

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२४

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४
०८८९०३१६९६१

मुद्रक-देवमुनि-भूदेव उपाध्याय
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
७७४२२२९३२७

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अक्टूबर प्रथम, २०२३

अनुक्रम

०१. वसुधैव कुटुम्बकम्	सम्पादकीय	०४
०२. जागो-जागो और जगाओ-(१)	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०५
०३. वैदिक सृष्टि प्रक्रिया एवं अमैथुनी...	डॉ. बलवीर आचार्य	०९
०४. योग: कर्मसु कौशलम्	आ.रामनिवास गुणग्राहक	१३
०५. वैदिक रश्मि सिद्धान्त पर टिप्पणी...	डॉ. भूपसिंह	१६
* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		२०
०६. ज्ञान सूक्त-०२	डॉ. धर्मवीर	२१
* ऋषि मेला-२०२३ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन		२४
०७. संस्था समाचार	श्री ज्ञानचन्द	२५
* १४० वाँ ऋषि बलिदान समारोह		२९
* वेदगोष्ठी-२०२३		३१
* योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर		३३

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

वसुधैव कुटुम्बकम्

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है- यह उक्ति प्रायः दुहराई जाती है। सामाजिकता के दायरे इतने छोटे हैं कि वैश्विक मानव समाज की कल्पना तो दूर किसी एक प्रदेश के किसी एक जिले के मनुष्यों को भी एक समाज में सामाजिकता के रूप में संग्रथित हुआ कहना भी कठिन है।

मनुष्य के अनेक सामाजिक संगठनों में बँटने के कारण रही हैं- उपास्य, उपासना, पारस्परिक विवाह आदि सम्बन्धों को करने की सीमा, आजीविका के साधन या व्यवसाय की भूमिका। इनके अतिरिक्त पृथक्-पृथक् देश की भाषा-बोली तथा उनके रीति-रिवाज भी। देशज/भोगौलिक परिस्थितियों की भूमिका भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं रही। ये सभी समाज प्रायः अपने-अपने देश की सीमाओं में फूलते-फलते रहे हैं।

कोई समाज यदि पूर्णतः धर्म/सम्प्रदाय से प्रेरित होकर यदि बढ़ा है और राजनीति/सत्ता का संरक्षण उसे प्राप्त हुआ तो दूसरे देश में जाने पर भी अधिकांश रूढ़ियाँ/अन्धविश्वास उसके साथ पले-बढ़े हैं- उदाहरणार्थ इस्लाम। इस प्रकार के समाज किसी दूसरे समाज के साथ तादात्म्य स्थापित करते दिखाई नहीं देते। भारतभूमि इसका अपवाद है। यहाँ उत्पन्न मत-सम्प्रदाय (जैसे बौध) यदि किसी अन्य देश में गए और वहाँ जाकर बढ़े हैं, तो उस देश के सामाजिक ढाँचे को उससे कोई हानि नहीं हुई। साथ ही उस देश और उसके नागरिकों के प्रति कोई विद्वेष भी वहाँ नहीं बढ़ा। न ही वहाँ की राष्ट्रीयता पर कोई आँच आई।

भारतीय सामाजिक संरचना का एक अन्य महत्त्वपूर्ण पक्ष रहा है कि- न केवल अपने देशज समाज का हित चिन्तन महत्त्वपूर्ण है, अपितु मनुष्य और मनुष्य के बीच किसी प्रकार के भेद को कोई स्थान नहीं है। इसी का परिणाम रहा कि व्यक्तिगत हित चिन्तन के साथ-साथ समष्टिगत हितचिन्तन को भी महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। यह समष्टिगत चिन्तन भौगोलिक सीमाओं के पार मनुष्य मात्र के कल्याण की कामना से युक्त है। इसीलिए कहा गया है-

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

यह मेरा अपना है और यह दूसरा है। यह चिन्तन लघुचेता अर्थात् छोटी सोचवालों का है। उदार-चरितों के लिए तो सम्पूर्ण पृथिवी ही एक परिवार या कुटुम्ब है। इसीलिए इस संस्कृति से सम्पोषित व्यक्तित्व देशहित-समाजहित का चिन्तन करते समय उसे व्यापक परिदृश्य में देखता है। भारत के मनीषियों ने समय-समय पर इस विचार को प्रसृत किया। मानवता का संरक्षण इस उदार एवं विशाल दृष्टिकोण द्वारा ही सम्भव है। महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज की स्थापना के समय नियम निर्धारित करते हैं- ''संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है।''

वैज्ञानिक प्रगति के कारण भौगोलिक दूरियाँ सिमट गई हैं। इससे एक स्थान पर किसी भी कारण पड़ने वाले प्रभाव दूसरे स्थान को प्रभावित करते हैं। वैश्विक स्तर पर भी कई-कई देश मिलकर ग्रुप बनाकर एक-दूसरे के प्रति सहयोगी रुख प्रदर्शित करते रहते हैं। पिछले दिनों जी-२० के आयोजन के समय भारत के प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 'एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य' की अवधारणा पर बल प्रदान किया। वैश्विक स्तर पर मानव जीवन की गरिमा बनाए रखने की दृष्टि से जिस सूझबूझ का परिचय देते हुए असम्भव लगने वाले कार्यों को सैद्धान्तिक रूप में सम्भव किया वह भारतीय संस्कृति की यथार्थ क्रियात्मक अभिव्यक्ति ही है।

आज मानवता के समक्ष-पर्यावरण, कुछ देशों की विस्तारवादी नीति एवं तदनुकुल प्रयास, प्रायोजित आतंक बहुत बड़े खतरे हैं। इन सभी खतरों को समाप्त कर सुखी संसार की कल्पना तभी सम्भव है, जब शक्ति सम्पन्न राष्ट्र समपूर्ण विश्व को एक परिवार मानकर तदनुकूल ईमानदार प्रयत्न करेंगे। साथ ही भारत में भी भारतीय संस्कृति/वैदिक संस्कृति को सुरक्षित एवं संरक्षित किया जाना आवश्यक है। इसे कमजोर अथवा नष्ट करने के प्रयत्न मानवता के लिए विघातक ही सिद्ध होंगे, क्योंकि- ज्येष्ठता-कनिष्ठता को छोड़कर बन्धुत्व भाव से मिलकर समृद्ध एवं सौभाग्यशाली बनने के लिए आगे बढ़ने का सन्देश केवल और केवल इसी संस्कृति का उद्घोष है। **-डॉ. वेदपाल**

जागो-जागो और जगाओ-(१)

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

एक लम्बे समय तक आर्यमसाज के नगरकीर्तनों, उत्सवों, प्रभाव फेरियों व सत्संगों में श्री पण्डित देशराज जी रचित यह गीत अत्यन्त जोश व श्रद्धा से गाया जाता था-

धन्य है तुझ को अय ऋषि,
तूने हमें जगा दिया।
सो सो के लुट चुके थे हम,
तूने हमें बचा लिया।।

ऋषि ने हमें जगाया तो आर्यसमाज के विद्वानों, लेखकों, विचारकों, शास्त्रार्थ महारथियों, समर्पित संन्यासियों ने लेखनी व वाणी तथा शास्त्रार्थों से सब मत पन्थों को ऐसा झकझोरा और जगाया कि उनके नये पुराने साहित्य पर हमारे विद्वानों के जगाने से ऐसी गहरी छाप पड़ कि हम इस विषय पर अपने लेखकों के प्रमाण न देकर अन्य मतों के गुरुओं और शिरोमणि विद्वानों के साहित्य से ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज के जागरण सन्देश के अद्‌भुत प्रभाव के प्रमाण देते हैं।

राधा स्वामी मत के तीसरे गुरु का लेख : राधास्वामी मत आगरा के तीसरे गुरु श्री शिवव्रतलाल वर्मन (हजूर जी महाराज) ने महर्षि दयानन्द जी का उर्दू में जीवन चरित्र लिखकर उनके विरोध में भी कुछ-कुछ लिखा तो महर्षि का गुणगान करने और संसार को जगाने पर लिखा तो भी कमाल कर दिया।

आपने ऋषि के आरम्भिक काल के शंखनाद की घटना चाँदापुर शास्त्रार्थ पर लिखा है कि यह शास्त्रार्थ पाँच दिन होना था। विषय भी निश्चित हो चुके थे, परन्तु दूसरे ही दिन ऋषि जी को बिना बताये मौलवी व पादरी भाग खड़े हुये।

राधास्वामी गुरु ने इस घटना पर लिखा है कि हिन्दुओं ने लम्बे समय के पश्चात् पहली बार ही मौलवियों व पादरियों को ऋषि के सामने पीठ दिखा कर भागते देखा।

इस चांदापुर शास्त्रार्थ में ईसाई पादरी ने कहा, "सुनो भाई मौलवी साहबो! कि पण्डितजी इसका उत्तर हजार प्रकार से दे सकते हैं। हम और तुम हजारों मिलकर भी उनसे बात करें तो भी पण्डित जी बराबर उत्तर दे सकते हैं।"

पं. गंगाप्रसाद शास्त्री सनातन धर्म के नेता, विद्वान् तथा वक्ता, लेखक थे। आपने ऋषि दयानन्द पर अपनी एक पुस्तक में लिखा है कि कुम्भ आदि मेलों पर काशी, प्रयाग, हरिद्वार आदि तीर्थों पर महाराष्ट्र के संस्कृतज्ञ पण्डित से ईसाई पादरी बने नीलकण्ठ शास्त्री काशी आदि के ब्राह्मण के सामने हजारों हिन्दुओं को उसने धर्मच्युत करके ईसाई बना लिया। ये पण्डित देखते ही रह गये। महर्षि दयानन्द जी के सामने जब सन् १८७४ में प्रयाग में वह बात करने पहुँचा तो ऋषि ने उसकी बोलती बन्द कर दी।

मुसलमानों ने पूरी शक्ति से ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज के विरोध में लिखा। यह आर्य विद्वानों की लेखनी व वाणी का फल है कि इस युग में इस्लाम के एक महान् और लोकप्रिय लेखक स्वर्गीय प्रो. गुलाम जेलानी ने अन्तिम दिनों में 'अल्लाह की आदत' नाम से मौलिक पुस्तक लिखी। इसम में पहल बार ही किसी ने इस नाम से इस विषय पर एक पठनीय पुस्तक लिखी है। सर सैयद अहमद ने अवश्य 'अल्लाह की आदत' का एक लेख में संक्षेप से उल्लेख किया है।

उसके जीवन काल में मैंने उसकी पुस्तकों को पढ़कर एक लेख में लिखा था कि डॉ. गुलाम जेलानी पूज्य उपाध्याय जी के और मेरे लेखों को उर्दू पत्रों में ध्यान से पढ़ता है। वयोवृद्ध आर्य संन्यासी स्वामी धर्मानन्द जी ने उसकी पुस्तक पर मेरे व्याख्यान सुनकर उस पुस्तक के

विषय में एक मौलिक पुस्तक लिखने की प्रबल प्रेरणा दी थी। अब एक मास में आर्यसमाज के जागृति के शंखनाद के चकित कर देने वाले प्रभाव पर मेरे द्वारा लिखित एक सौ पृष्ठों की यह पहली पुस्तक पाठकों को प्राप्य होगी। इसकी प्रेरणा देने के लिये मैं स्वामी धर्मानन्द जी का आभार कैसे प्रकट करूँ? लेखक डॉ. गुलाम जेलानी ने पुस्तक के आरम्भ से अन्त तक बार-बार यह लिखा है कि अल्लाह कभी अपना स्वभाव नहीं बदलता। धर्म का कभी विकास नहीं होता। धर्म अनादि काल से एक ही है। कुरान की रसूल की जन्नत की दोज़ख की दुहाई देते हुये भी ऋषि दयानन्द की मान्यताओं की छाप को खुलकर स्वीकार करता है। ईश्वर की दया व न्याय का प्रयोजन वह एक ही मानता है। यह ऋषि की ही देन है।

बहिश्त में क्या होता है? : हदीसों से इस्लाम का पिण्ड छूट गया है। बहु विवाह का खुल कर खण्डन किया गया है। 'अल्लाह प्रल के दिन पाप पुण्य का न्याय करता है', अब यह मान्यता भी गई। अल्लाह प्रति पल न्याय करता है। पुनर्जन्म के पक्ष में भी एक प्रमाण दिया है। बहिश्त की चर्चा तो की है, परन्तु वहाँ क्या होता है? इस पर चुप्पी साध ली है। बहिश्त में क्या स्त्रियाँ भी जाती हैं? उन्हं वहाँ क्या मिलता है? यह नहीं बताया। वेद में एकेश्वरवाद की महिमा है। एक प्रभु की पूजा का ही विधान है। यह स्वीकार किया है।

मैंने अपनी इस पुस्तक को एक सौ पृष्ठ से कुछ कम ही रखा है। आर्यसामाजिक साहित्य में यह अपने विषय की पहली पुस्तक है। विश्व साहित्य में भी यह इस्लाम पर ऐसी इकलौती पुस्तक है।

सब राजनीतिक दल चुप्पी साधे हैं : सारे राजनेता तथा राजनीतिक दल दलितों की पिछड़ों की बातें तो करते हैं, परन्तु ऊँच-नीच को मिटाने और दलितों को सम्मान दिलाने के लिये आज तक बलिदान तो केवल आर्यों ने ही दिये हैं। दलितों की वोट के लिये दुहाई देने वाले किसी भी दल ने आज तक दलितों के लिये जानें वार देने वाले किसी शहीद का कृतज्ञता से नाम तक नहीं लिया। वीर रामचन्द्र, वीर मेघराज तथा दीनबन्धु महात्मा फूलसिंह शहीद के नाम पर देश में कोई समरसता दिवस नहीं है। गांधी बाबा ने महात्मा फूलसिंह की भूख हड़ताल पर खुल कर लिखा था, परन्तु इस बलिदानी का नाम लेने से भी आज हर कांग्रेसी की जान निकलती है।

संघ वाले इन बलिदानियों का नाम लेने की सोच भी नहीं सकते सो हिन्दुत्व की तोता रटन लगाने वाले भाजपाई इन दिलजले तपस्वी निडर शहीदों के नाम पर समरसता दिवस क्यों मानें?

आर्यसमाजियों की यह घातक चुप्पी : आर्यजाति, आर्यधर्म तथा आर्यसमाज के विरुद्ध प्रत्येक कथन और वार--प्रहार पर पहले आर्य लेखक तथा वक्ता उत्तर देने को हर घड़ी उद्यत होते थे। ऐसे ही आर्य धर्म तथा आर्यसमाज के गौरव तथा आर्य विद्वानों की शान व कष्ट सहन की प्रत्येक उपलब्धि के विषय में झट से आर्यसमाजी लेखक तथा वक्ता कुछ प्रतिक्रिया देकर उसे मुखरित करने में देर नहीं लगाते थे। अब आर्यसमाज में यह समझिये कि ऐसे जागरुक आर्य विद्वान् बचे ही नहीं। यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है। अपवाद तो कुछ है।

कुछ दिन पूर्व किसी प्रदेश से एक आर्य ने यह प्रश्न पूछा कि उसने किसी से सुना है कि महाशय कृष्ण जी तो स्वामी श्रद्धानन्द जी के सदा विरोधी रहे।

मैंने उस बन्धु को कहा कि यह ठीक है कि आर्यसमाज में दो व्यक्ति सदा यह राग अलापते रहे, परन्तु इतिहास तो यह प्रमाणित करता है कि श्री महाशय कृष्ण जी ने प्रत्येक आन्दोलन में संघर्ष की वेला में निडरतापूर्वक श्री स्वामी जी के साथ जुड़कर वैर विरोध और विपदाओं का सामना किया। प्रमाण चाहिये तो 'जीवन यात्रा स्वामी श्रद्धानन्द' अपने विषय का सबसे बड़ा ग्रन्थ पढ़ लीजिये। सत्य और तथ्य का पता चल जावेगा।

जब स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज सन् १९०७ में लाला लाजपतराय जी को देश से निष्कासित करने के लिये गोराशाही से टक्कर ले रहे थे तब महाशय जी के प्रकाश में में प्रकाशित एक सम्पादकीय को छापकर इंग्लैण्ड के एक सम्पादक ने अपने सम्पादकीय में महाशय जी के विरुद्ध एक भड़कीला लेख लिखा था जिसका शीर्षक था –

"A Fiety Editor of Lahore."

अर्थात् आर्यसमाज का एक आग्नेय सम्पादक अंग्रेजों द्वारा आर्यसमाज के विरुद्ध सबसे भड़कीले लेख जो लिखे गये यह उनमें से एक है।

आर्यसमाज में एक उपहासकार ने यह मनगढन्त बात लिख दी कि यह एक लेख न होकर महाशय जी को दिया गया ख़ताब था।

इसी से जुड़ी एक दूसरी घटना है। उन्हीं दिनों सरकार ने महाशय जी पर अभियोग चलाकर उन्हें जेल में ठूँसना चाहा। तब स्वामी जी ने महाशय जी से कहा था, ''मैं तुम्हारा केस लडूँगा। आप निश्चिन्त रहें।'' अब यह स्वर्णिम इतिहास आर्यसमाज में लुप्त हो चुका है।

आर्यसमाज के इस काल में जिन्हें इतिहासपरक लेख लिखने की सनक देखी गई उनमें से किसी ने भी आर्य विद्वानों, लेखकों, शास्त्रार्थ महारथियों पर चलाये गये अभियोगों में उनको दी गई यातनाओं पर कभी एक पंक्ति न लिखी। किसने पं. शान्तिप्रकाश जी के केस में उनके हाथों में लगी हथकड़ियों व पैरों में डाली बेड़ियों के घावों पर कुछ लिखा?

राजेन्द्र 'जिज्ञासु' गुरुद्वारा सिग्रेट केस में जीवित घर आ गया। दिन रात यातनायें सहकर बच कैसे गया? यह आर्यसमाज में वर्तमान में किसने लिखा? श्री पं. निरञ्जनदेव जी के केस में उनको कितना सताया गया यह उनके (मेरे नाम लिखे) पत्रों से अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसे कुछ पत्र छप चुके हैं।

आर्यसमाज में हमारे दो बड़े व्यक्ति १. महात्मा आनन्दभिक्षु जी तथा डॉ. हरिप्रकाश जी जान से उनके बचाव में बहुत कुछ कर रहे थे। पण्डित जी तब विचलित तो नहीं हुये। आप आत्मीयता से पूज्य पं. शान्तिप्रकाश जी को और मुझे स्थिति से अवगत कर देते थे। कांग्रेस का उन पर भारी दबाव था कि या क्षमा माँग लो या खेद ही प्रकट कर दीजिये। केस हटा दिया जावेगा। लेखराम के इस दुलारे प्यारे मिशनरी ने अत्यन्त दृढ़ता दिखाकर हमारा सिर ऊँचा कर दिया।

आर्यसमाज के सात खण्डों के इतिहास के पोथों में प्रान्तीय सभाओं के प्रधानों के तो नाम हैं, परन्तु दिनरात समाज की सेवा व रक्षा में कष्टों से जूझने वाले वैद्य रविदत्त जी का नाम नहीं मिलेगा। क्यों? इस चुप्पी पर हम क्या लिखें?

आर्यसमाज के कुछ कृपालु लेखकों के कारण आर्यसमजा पिछड़ता गया। अन्य मत पन्थों के कई-कई साहित्यकारों के नाम साहित्य अकादमी द्वारा छपे ग्रन्थों में फोटो सहित जीवन परिचय में मिलते हैं। आर्यसमाजी लेखकों में से केवल इस लेखक का परिचय ही छप सका। उसमें हमारे कई नामी विद्वानों के नाम नहीं। आर्यसमाज के लोगों ने चुप्पी साध ली। मेरे प्रयत्न इस दिशा में अधूरे रहे।

एक विदेशी मुस्लिम स्कॉलर ने बर्मिघम से पीएच.डी. करते हुये आर्यप्रकाशक अजय जी को और मुझे कई पत्र लिखे। उसके पीएच.डी. का विषय आर्यसमाज के शास्त्रार्थ थे। उसके शोध ग्रन्थ का निर्णय आर्यसमाज के विरुद्ध जा रहा था। वह अजय जी से आर्य सामाजिक साहित्य की पुस्तकें शोध के लिये मँगवाता रहता था। उसके शोध के लिये उपयोगी अजय जी ने मेरी कई पुस्तकें उसे पहुँचा दी।

उसको अपने शोध ग्रन्थ का निष्कर्ष बदलना पडा। अब यह आर्यसमाज के पक्ष में गया। उस ने आर्यसमाज की खूब प्रशंसा की। उसने अजय जी द्वारा मुझे पत्र लिखकर यह जानकारी दी कि आपका साहित्य पढ़कर

मुझे निष्कर्ष बदलना पड़ा। उसके उस पत्र के लिफ़ाफ़े के cover (कवर) का फोटो 'आर्यसमाज के इतिहास' के तीसरे भाग में छपा है। किसी ने आर्यसमाज में अजय जी को, मुझे तथा उस स्कॉलर शहरयार को बधाई का पत्र न लिखा। आर्यसमाज की इस चुप्पी को आप क्या कहेंगे? आर्यो! जागो! जागो।

आर्यसमाज के सिद्धान्तों व इतिहास विषय पर देश के उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम के आर्यो ने मुझसे ग्रन्थ लिखवाये। आर्यसमाज में सबने चुप्पी साध रखी है। कर्नाटक में मेरे द्वारा लिखित कर्नाटक के आर्यसमाज के इतिहास पर कन्नड़ में छपने कर्नाटक में तो अच्छी प्रतिक्रिया मिली, परन्तु अन्यत्र सब चुप हैं। मैं तो खोद-खोद कर आर्यसमाज के सपूतों का और आर्यसमाज का विलुप्त इतिहास प्रकाश में ला रहा हूँ। मैंने पैसे के लिये एक पृष्ठ नहीं लिखा। पं. लेखराम जी के नाम पर लिखता हूँ। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी और साहित्य पिता पूजनीय पं. गंगाप्रसाद जी के आशीर्वाद से लिखे जा रहा हूँ।

भारत का सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता कन्नड़ महाकवि बिना सूचना दिये मुझे डी.ए.वी. कॉलेज शोलापुर में मिलने आये। क्या यह कोई छोटी घटना थी? महाकवि जी को जब आर्यसमाज का कुछ साहित्य मैंने भेंट किया तो आपने वहाँ तीनों डी.ए.वी. कॉलेजों के कोई तीस प्राध्यापकों के सामने पहली बार कॉलेज में वेद की, ऋषि के वदे भाष्य की महिमा पर खुलकर उनके विद्वत्तापूर्ण विचार सुने। उस समय उस महाकवि ने पूज्य पं. भगवद्दत्त जी की शान में एक गौरवपूर्ण वाक्य कहा।

सार्वदेशिक सभा ने सार्वदेशिक पत्र में गर्व से मेरा एतद्विषयक लेख छापा। पं. भगवद्दत्त जी ने गद्गद होकर आशीर्वाद दिया। डी.ए.वी. के पत्र के लिये इसका कुछ भी महत्त्व न समझा गया। यह तो ऋषि दयानन्द जी, जिज्ञासु की, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय और श्री पं. भगवद्दत्त जी की शोभा की घटना है। इस सोच पर बलिहारी!

पूरे विश्व के कई ग्रन्थों में यह छपता चला आ रहा है कि सारे विश्व में सर्वाधिक जीवनियाँ इस लेखक ने लिखी हैं। मेरे साहित्य में तो मेरे परिचय में इस तथ्य की, इस सेवा की और इस उपलब्धि की चर्चा अवश्य होती है, परन्तु आर्यसमाज में तो किसी ने कहीं इन जीवनियों को संग्रहीत ही नहीं किया। इन पर किसी ने लिखना तो क्या था! इसका कारण यही समझ में आता है कि मैं आर्यसमाज का सभासद तो हूँ, परन्तु वैसे कुछ नहीं हूँ। आर्यसमाज की चुप्पी पर इसके अतिरिक्त भी कुछ लिखूँगा।

(क्रमशः)

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय का पुनः आरम्भ २६ अगस्त को किया गया है। यह चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें।

- मन्त्री

वैदिक सृष्टि प्रक्रिया एवं अमैथुनी सृष्टि की तार्किकता

डॉ. बलवीर आचार्य

सृष्टि का निर्माण कब हुआ? किसने किया? क्यों किया? किस प्रकार किया? ये प्रश्न मानव मन में चिन्तन की धारा के साथ ही प्रारम्भ हो गये थे और आज भी- मानव इन प्रश्नों की खोज में लगा हुआ है। सर्वप्रथम वेद में सृष्टि उत्पत्ति की समस्या को उठाते हुए प्रश्न किये गये हैं कि-

(क) को अद्धा वेद क इह प्रवोचत कुत आ जाता कुत इयं विसृष्टिः।

(ख) किमावरीव कुहकस्य शर्मन्।

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावा पृथिवी निष्टतक्षुः।

किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत्स्वित्कथासीत्। यतो भूमिं जनयन विश्वकर्मा विद्यामौर्णोन्महिना विश्वचक्षा।।

अर्थात् कौन जानता है और कौन बता सकता है कि इस सृष्टि का निर्माण कहाँ से और कैसे हुआ? सृष्टि का कारण तत्त्व क्या था और किसके आधीन था? वह कौन सा वृक्ष था जिससे द्युलोक और पृथिवी लोक को निकाला गया? जहाँ से विश्वकर्मा परमेश्वर ने इस भूमि को उत्पन्न किया उसका आरम्भण=उपादान क्या था और कैसा था? जब वेद का ऋषि इस प्रकार के प्रश्न करता है तब सृष्टि उत्पत्ति-विषयक जिज्ञासा की शाश्वतता में कोई सन्देह नहीं रह जाता।

इन प्रश्नों के समाधान का प्रयत्न भी उतना ही प्राचीन है जितने प्राचीन ये प्रश्न है। ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में सृष्टि निर्माण की पूर्वावस्था अर्थात् प्रलय का वर्णन करते हुए कहा गया है कि- 'उस समय ऐसी अवर्णनीय अवस्था थी जिसको यह भी नहीं कह सकते कि कुछ नहीं था और न यह कह सकते हैं कि कुछ था। न ये लोक लोकान्तर थे, न आकाश था, न भोग्य पदार्थ थे, न भोक्ता था, न मृत्यु थी न जीवन था, न रात्रि थी और न दिन था। एक मात्र स्वधा=प्रकृति के साथ चेतन सत्ता थी और वह चेतन सत्ता सर्वोत्कृष्ट थी। यह सब दृश्यमान् जगत् प्रलय की अवस्था में अन्धकार से आच्छादित था, तर्क से भी परे और प्रत्येक चिह्न से रहित अपने कारण में वर्तमान था। अर्थात् प्रलय के समय यह कार्य रूप जगत् अपने कारण प्रकृति के साथ एकीभूत रूप में था।

इस प्रलय अवस्था में परमेश्वर ने सृष्टि रचना की कामना की, यह कामना ही सृष्टि रचना का प्रथम कारण बना। इस कामना के बाद परमेश्वर ने तप तपा। अर्थात् इस कामना से प्रलय अवस्था में वर्तमान मूल प्रकृति में विक्षेभ उत्पन्न हुआ और सृष्टि निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई।

तैत्तिरीय उपनिषद् में भी इस तप की प्रक्रिया का उल्लेख करते हुए कहा गया है ''**सो कामयत। बहुस्यां प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। स तपस्तप्त्वा इदं सर्वमसृजत। यदिदं किञ्च। तत्सृष्ट्वा तदेवानु प्राविशत्।**

अर्थात् परमेश्वर ने कामना की कि मैं एक से अनेक हो जाऊँ, तब उसने तप किया अर्थात् मूल प्रकृति में उग्र रूप से विक्षोभ हुआ और सृष्टि की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई वह इस सृष्टि का सृजन करके इसी में व्यापक रूप से समा गया। इसी भाव का वर्णन ऋग्वेद में इस प्रकार किया गया है

ब्रह्मणस्पतिरेता सं कर्मार इवाधमत्।

देवानां पूर्व्ये युगेऽसतः सदजायत।।

अर्थात् परमेश्वर ने प्रकृति के परमाणुओं को लोहार के समान धोंका अर्थात् तपाया और अव्यक्त प्रकृति से व्यक्त ब्रह्माण्ड उत्पन्न किया।

ऐतरेय ब्राह्मण १३.३९ में वर्णन है कि ''प्रजापति

का रेतस् सरोवर के रूप में एकत्रित हो गया तथा वह पिण्डीभूत होकर फट गया। उसके फटने पर विभिन्न प्रकार की चिनगारियाँ निकली। इन चिनगारियों से विविध प्रकार की सृष्टि उत्पन्न हुई।

उपर्युक्त विवेचन की तुलना वर्तमान वैज्ञानिकों द्वारा सृष्टि उत्पत्ति के Big Bang सिद्धान्त से की जा सकती है।

सृष्टि उत्पत्ति का क्रम इस विषय में महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते हैं कि ''जब सृष्टि का समय आता है, तब परमात्मा उन परमसूक्ष्म पदार्थों को इकट्ठा करता है। उसकी प्रथम अवस्था में जो परम सूक्ष्म प्रकृति रूप कारण से कुछ स्थूल होता है उसका नाम महत्त्व और जो उससे कुछ स्थूल होता है उसका नाम अहंकार और अहंकार से भिन्न-भिन्न पाँच सूक्ष्म भूत, श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, घ्राण पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ-वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ है, और ग्यारहवां मन कुछ स्थूल उत्पन्न होता है और उन पाँच तन्मात्राओं से अनेक स्थूलावस्थाओं को प्राप्त करते हुए क्रम से पाँच स्थूल भूत जिनको हम प्रत्यक्ष देखते हैं, उत्पन्न होते हैं। उनसे नाना प्रकार की औषधियाँ, वृक्षादि, उनसे अन्न, अन्न से वीर्य और वीर्य से शरीर होता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उपर्युक्त कथन शास्त्रीय परम्परा के आधार पर प्रस्तुत किया है। तैत्तिरीय उपनिषद् की ब्रह्मानन्द वल्ली में निम्नलिखित सन्दर्भ है-

तस्माद्वा एतस्मादात्मनः आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भयः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधिभ्योऽन्नम्। अन्नाद्रेतः। रेतसः पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः।

अर्थात् ''उस परमेश्वर और प्रकृति से आकाश 'अवकाश' अर्थात् जो कारण रूप द्रव्य सर्वत्र फैल रहा था, उसको इकट्ठा करने से आकाश उत्पन्न सा प्रतीत होता है, वास्तव में आकाश की उत्पत्ति नहीं होती, क्योंकि बिना आकाश के प्रकृति और परमाणु कहाँ ठहर सके? आकाश के पश्चात् वायु, वायु के पश्चात् अग्नि, अग्नि के पश्चात् जल, जल के पश्चात् पृथिवी, पृथिवी से ओषधी, ओषधियों से अन्न, अन्न से वीर्य, वीर्य से पुरुष अर्थात् शरीर उत्पन्न होता है।''

महर्षि कपिल ने सांख्या शास्त्र में सृष्टि प्रक्रिया का विस्तृत विवेचन करते हुए पच्चीस तत्त्वों को स्वीकार किया है। उनके अनुसार प्रलय काल में सत्व, रज एवं तम इन तीन गुणों की साम्यावस्था में वर्तमान प्रकृति से महत् तत्त्व= बुद्धितत्त्व उत्पन्न होता है। इससे अहंकार की उत्पत्ति होती है। अहंकार से ग्यारह इन्द्रियाँ एवं पाँच तन्मात्राओं (सूक्ष्म भूतों) की उत्पत्ति होती है। अन्त में पाँच तन्मात्राओं से पाँच महाभूत उत्पन्न होते हैं। ये चौबीस तत्त्व हैं और पच्चीसवां तत्त्व पुरुष अर्थात् जीव और परमेश्वर है।

बुद्धि, अहंकार और मन प्रकृति से उत्पन्न होने के कारण अचेतन हैं, परन्तु पुरुष के चैतन्य के प्रकाश से चेतन की तरह प्रतीत होते हैं। ये तीनों अन्तःकरण हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ-आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा तथा पाँच कर्मेन्द्रियाँ-वाक्, हाथ, पैर, पायु (गुदा) और उपस्थ (जननेन्द्रिय) ये दस बाह्य करण हैं। कुल मिलाकर ये तेरह करण हैं सांख्य दर्शन के अनुसार प्रकृति केवल कारण है। वह किसी का कार्य नहीं। महत्त्व (बुद्धि), अहंकार और पंच तन्मात्रायें, ये सात तत्त्व कार्य और कारण दोनों हैं। पाँच महाभूत केवल कार्य हैं किसी का कारण नहीं। पुरुष न किसी की प्रकृति उपादान कारण है और न किसी का कार्य है।

अमैथुनी सृष्टि

जब प्राणियों की उत्पत्ति स्त्री एवं पुरुष के मिथुन (सहवास) से होती है वह मैथुनी सृष्टि कहलाती है। जैसे वर्तमान में प्राणियों की उत्पत्ति मिथुन (सहवास) से होती है, परन्तु यह प्रक्रिया सृष्टि निर्माण के समय सबसे पहले जब प्रथम प्राणी बना तब सम्भव नहीं थी। सृष्टि के प्रारम्भ में प्राणियों की उत्पत्ति परमेश्वर की

व्यवस्था से बिना मिथुन (सहवास) के हुई थी। इस विषय में महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते हैं कि ''आदि सृष्टि मैथुनी नहीं होती, क्योंकि जब स्त्री-पुरुषों के शरीर परमात्मा बनाकर उनमें जीवों का संयोग कर देता है तदनन्तर मैथुनी सृष्टि चलती है।'' अमैथुनी सृष्टि के सन्दर्भ में वेदों में अनेक प्रमाण मिलते हैं। यथा-

ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदोऽमध्यमासो महसा वि वावृधुः।

सुजातासो जनुषा पृश्निमातरो दिवो मर्या आ नो अच्छा जिगातन।।

अर्थात् सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न होने वाले मनुष्य वनस्पति की तरह उत्पन्न हुए थे। उनमें कोई बड़ा, छोटा अथवा मंझला न था। वे सब अवस्था में एक समान थे। ''मुण्डकोपनिषद् में कथन है कि ''**तस्माच्च देवा बहुधा सम्प्रसूताः साध्या मनुष्याः पशवो वयांसि**'' अर्थात् उस समय बहुत संख्या में देवाः विद्वान्, साध्याः=उत्तम=कोटि के साधक विद्वान्, मनुष्य, पशु और पक्षी उत्पन्न हुए। मनुस्मृति में भी इसी प्रकार का वर्णन किया गया है। इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि सृष्टि के आदि में युवा अवस्था में सहस्त्रों की संख्या में मनुष्यों सहित विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि प्राणी एवं विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ, वृक्षादि उत्पन्न हुए थे।

सृष्टि उत्पत्ति विषय पर अनुसन्धान करने वाले कुछ आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसन्धान से भी उपर्युक्त वैदिक सिद्धान्त की पुष्टि होने लगी हैं। Smithsonion institute Boston USA के Dr. Clark का कथन है कि "Man appeared able to walk, able to think and able to defend himself.

इंग्लैण्ड के शेफील्ड एवं वारविक विश्वविद्यालय के शोधकर्त्ताओं ने मुर्गी के अण्डे पर शोध के बाद यह रहस्य उद्घाटित किया है कि मुर्गी का जन्म पहले हुआ था- बाद में अण्डा उत्पन्न हुआ।

सन् १८७१ ई. से वैज्ञानिक यह अनुसन्धान कर रहे हैं कि पृथिवी पर जीवन दूसरे ग्रहों से आया था। विज्ञान की इस शाखा को PENSPERMIA कहा जाता है। विक राम सिंह एवं Milton Wainwright का कथन है कि "The sudden appearance of life on Earth may seem une&pected. अर्थात् पृथिवी पर जीवन की अचानक उपस्थिति अप्रत्याशित लग सकती है।

अमैथुनी सृष्टि के विषय में प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वानञ्च आचार्य पं. उदयवीर जी शास्त्री का चिन्तन बहुत उपयोगी है। इस चिन्तन का सार निम्नलिखित है-

सृष्टि के प्रारम्भ में प्राणियों की उत्पत्ति मिथुन से नहीं होती। परमेश्वर अपने अप्रतिम सामर्थ्य एवं व्यवस्था से स्त्री एवं पुरुषों के शरीर बनाकर उनमें जीवों का संयोग कर देता है। प्राणी शरीर की रचना अत्यन्त जटिल है। शरीर रचना की इस सुव्यवस्था को देखकर रचना करने वाले का अनुमान होता है। परमेश्वर ने सृष्टि सृजन के समय जो व्यवस्था जिस प्राणी वर्ग में निश्चित कर दी वह इरा सृष्टि के मिथुन मूलक प्रजनन में अब तक चली आ रही है और प्रलय पर्यन्त चलती रहेगी। इस प्रकार सृष्टि के प्रारम्भ में सबसे पहले शरीर की रचना मैथुन रहित परमात्मा की नित्य व्यवस्था से होती है। यह अनुमान वर्तमान में देखी गयी व्यवस्था के आधार पर किया जा सकता है।

सृष्टि के आदि में सर्वप्रथम जो प्राणी हुए, विशेषतः मानव प्राणी, उनका पालन पोषण करने वाला माता - पिता आदि कोई नहीं था, इसलिए यह निश्चित सम्भावना होती है कि वे मानव किशोर अवस्था में उत्पन्न हुए थे।

प्रश्न यह है कि मानव का यह विकसित शरीर सर्वप्रथम उत्पन्न कैसे हुआ होगा? उसकी रचना किस प्रकार हुई होगी? इसे समझने के लिए हमें वर्तमान में चल रही सृष्टि के प्रजनन प्रक्रिया का विश्लेषण करना होगा, जिससे इस समस्या की तार्किकता पर कुछ प्रकाश पड़ जाये।

वर्तमान प्रजनन की व्यवस्था साधारण रूप से चार प्रकार की दृष्टिगोचर होती है- (१) जरायुज, (२) अण्डज, (३) उद्भिज और (४) स्वेदज/ऊष्मज। स्वेदज अथवा ऊष्म वर्ग के प्राणियों का शरीर एक निश्चित तापमान पाकर उत्पन्न हो जाता है। जैसे अति सूक्ष्म जीव-जन्तु, जूँ, लीक आदि। उद्भिज वर्ग के अन्तर्गत वनस्पतियाँ, वृक्ष आदि आते हैं। हमें यह पता है कि बीज से वृक्ष होता है, परन्तु सृष्टि के आदि में सबसे पहले वृक्ष का बीज कहाँ से आया? यह विचारणीय है। उस समय वृक्ष तो थे नहीं, तब यही अनुमान लगाया जा सकता कि उसकी रचना प्रकृति के गर्भ में हुई थी। वृक्ष पर बीज के निर्माण की प्रक्रिया भी एक चमत्कार ही है। बीज में प्रजनन की क्षमता उसके कोष में सुरक्षित रहती है। प्रजनन अंश किस प्रकार कोष में सुरक्षित हो जाते हैं? जड़ से बीज तक कैसे उसका निर्माण होता है? अभी तक तो यह रहस्य भी अनसुलझा ही है। इसी प्रकार अण्डज वर्ग में बीज एक अति सुरक्षित कोष में रहता है। इस वर्ग में चींटी जैसे सूक्ष्म जन्तुओं से लेकर सर्प, पक्षी आदि का समावेश है। चींटी, सर्प आदि विभिन्न जातियों के शरीर के अनुसार अण्डे रूपी कोष की रचना छोटी बड़ी होती है। इस वर्ग का भ्रूण एक विशेष प्रकार के खोल में सुरक्षित रहता है तथा माता के गर्भ से बाहर आकर भी एक निश्चित काल तक अण्डे रूपी कोश में पोषण प्राप्त करता है। जब भ्रूण का पूर्ण विकास हो जाता है तब अण्डा फट जाता है और भ्रूणबाहर निकल आता है। यह विचारणीय है कि भ्रूण का गर्भ के बाहर भी परिपोषण होता है। यह भी प्रकृति का एक चमत्कार ही है।

बड़े शरीर धारी प्राणी जरायुज हैं। जिसमें मनुष्य से लेकर पशुओं का समावेश है। कोश में भ्रूण की सुरक्षा एवं पोषण की प्राकृत व्यवस्था इस वर्ग में भी समान है जब तक भ्रूण का पूर्ण विकास नहीं हो जाता तब तक वह मातृ गर्भ में सुदृढ एवं स्निग्ध चमड़े की सुरक्षित थैली में रहता है जिसे जरायु कहते हैं। पूर्ण विकास होने पर शिशु जरायु को भेदकर गर्भ से बाहर आता है।

इस प्रकार उपर्युक्त चारों वर्गों में भूण की सुरक्षा, पोषण एवं विशिष्ट सुरक्षित कोश में परिवेष्टित होना समान है। यह एक ऐसी नियत व्यवस्था है, जो प्राणियों के प्रार्दुभाव की आदिम स्थिति पर प्रकाश डालती है। जैसे वर्तमान सृष्टि में नर एवं मादा के संयोग से प्राणियों की उत्पत्ति होती है और एक निश्चित प्रक्रिया से गर्भावस्था में शिशु सुरक्षित रहता है इस व्यवस्था से और अण्डज वर्ग के समान माता के गर्भ के बाहर भ्रूण के परिपोषण की प्रक्रिया से यह अनुमान होता है कि सृष्टि के आदि में सर्वप्रथम मानव आदि की रचना प्रकृति से सुरक्षित कोशों द्वारा हुई होगी। जैसे वर्तमान में विभिन्न प्राणियों के कोश विभिन्न है उसी प्रकार सृष्टि के आदि में विभिन्न कोशों में विभिन्न प्राणियों का विकास होकर वे युवावस्था में उत्पन्न हुए होंगे। यह सब ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार सम्भव है।

प्रोफेसर फ़्लोटिंग फ़ैकल्टी महर्षि दयानन्द एवं
वैदिक अध्ययन केन्द्र संस्कृत विभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)
Email : balviracharya@gmail.com
Web :www.vedichinduwisdom.com

आभूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं होता क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है। **सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास**

योगः कर्मसु कौशलम्

आचार्य रामनिवास 'गुणग्राहक'

बिना किसी सन्देह और विवाद के यह घोषणा की जा सकती है कि यह एक वाक्य सम्पूर्ण गीता का सार तत्त्व कहा जा सकता है। जिस श्लोक का यह चौथा चरण है, वह श्लोक भी एक बार देख और समझ लेना चाहिए। 'बुद्धियुक्तो जहति इह उभे सुकृतः दुष्कृते। तस्मात् योगाय युज्यस्वः योगः कर्मसु कौशलम्।।' (२.५०) श्रीकृष्ण इस श्लोक के द्वारा अर्जुन को समझा रहे हैं कि बुद्धि के द्वारा अच्छे व बुरे दिखने वाले कर्मों के प्रति अपनेपन के भावों को समाप्त कर दो। इसके लिए योग से युक्त होकर कर्म करो। योग की परिभाषा देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं - अर्जुन! कर्म की कुशलता ही योग है। सम्पूर्ण गीता ही नहीं सारा ज्ञान-विज्ञान सारे धर्म उपदेश सारी शिक्षाएएँ केवल 'योगः कर्मसु कौशलम्' को सफल और सार्थक करने के लिए ही हैं। क्या है यह 'कर्मकुशलता'? कैसे प्राप्त की जा सकती है- 'कर्मकुशलता'? क्या लाभ है- 'कर्मकुशलता' का? ये तीन प्रश्न ही हमारे विचार और चिन्तन-मनन के मुख्य बिन्दु रहेंगे। इनके उत्तर जितने सरल ढंग से सफलतापूर्वक समझे-समझाये जा सकें तो समझो समझने-समझाने वाले दोनों का जीवन धन्य हो गया।

यह कहने और मानने में किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि वेद हमारी सत्य सनातन वैदिक संस्कृत के मूल स्रोत हैं। संसार का समग्र ज्ञान-विज्ञान वेदों से ही विस्तार को प्राप्त होकर धरती तल पर फैला है। यजुर्वेद में आता है- ''युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा। विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।'' अर्थात् ज्ञानी, विद्वान् महान् परमेश्वर में अपने मन और बुद्धि की वृत्तियों को युक्त करते हैं। चूँकि मानव-जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य है परमानन्दमय परमात्मा की प्राप्ति। इसीलिये हमारे तत्त्ववेत्ता ऋषि कहते हैं- 'अयं तु परमो धर्मः यत् योगेन् आत्मदर्शनम्' अर्थात् योग के द्वारा आत्मा-परमात्मा का साक्षात् दर्शन कर लेना ही परम धर्म है। परमात्मा-प्राप्ति के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रन्थ योग दर्शन के प्रणेता महर्षि पतञ्जलि जी महाराज जहाँ योग का स्वरूप बताते हैं, वहीं इसका फल परमात्मा की प्राप्ति प्रकट करते हैं। 'योगाश्चित्त वृत्ति निरोधः' के बाद दूसरा ही सूत्र है- 'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्'- अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध होने पर सबके द्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा की स्थिति होती है। योग की बड़ी सुन्दर और योग के विविध आयामों, विविध पक्षों को स्पष्ट करने वाली परिभाषा कठोपनिषद् के ऋषि प्रकट करते हैं।

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।
अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ।।

अर्थात् विद्वान् लोग उस स्थिति (अवस्था) को योग मानते हैं, जहाँ इन्द्रियाँ स्थिर हो जाती हैं, योगी आलस्य-प्रमाद से मुक्त हो जाता है। शुभ संस्कारों की उत्पत्ति और अशुभ संस्कारां के नाश का नाम योग है।

अब हम गीता क योग पर चर्चा करें- श्रीकृष्ण कर्मों की कुशलता को योग बताते हैं। कर्म के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण की घोषण है- 'नहि कश्चित क्षणमपि जातु तिष्ठति अकर्मकृत्।' अर्थात् मनुष्य जीवन में एक क्षण भी बिना कर्म किये नहीं रहता। भाव सीधा है कि वह प्रतिक्षण कर्म करता रहता है, चाहे वह कर्म शारीरिक हो, वाणी का हो या मन का। ऋग्वेद मन्त्र-१.६७.३ का भाष्य करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं- कोई मनुष्य कर्म के बिना क्षण भर भी स्थित नहीं हो सकता। जबकि वेद औरगीता एक स्वर से कहते हैं कि मनुष्य निरन्तर, प्रतिक्षण कर्म करता रहता है, ऐसे में श्रीकृष्ण के 'योग कर्मसु कौशलम्' की महत्ता और भी बढ़ जाती है। हम प्रतिक्षण कर्म कर रहे हैं तो हमारी कर्मकुशलता भी निरन्तर बनी रहनी चाहिए। निरन्तर वही चीज बनी रहती है जो हमारे स्वभाव का अंग बन जाए। कर्मकुशलता को

स्वभाव का अंग बना लेने की प्रेरणा देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं- 'सदृशं चेष्टते स्वस्या, प्रकृते ज्ञानवानपि। प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रह: किं करिष्यति।।' (३.३३) अर्थात् ज्ञानवान् लोग भी अपने स्वभाव के अनुसार ही चलते हैं इसलिए स्वभाव को ही उत्तम बनाओ, थोड़ी देर की रोकथाम से काम नहीं चलता। हमारे द्वारा जाने-अनजाने में शारीरिक, वाचिक और मानसिक स्तर पर सतत् होने वाले कर्मों को सावधान, सचेत होकर विवेकपूर्ण ढंग से, शास्त्रोक्त रीति से, धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य, पाप-पुण्य, उचित-अनुचित, शुभ-अशुभ की कसौटी पर परख कर कर्त्तव्यभाव से करना ही सच्चे अर्थों में 'कर्म कुशलता' है। इसके लिए अपने मन-बुद्धि को स्वाभाविक रूप से सजग, श्रेष्ठ व सन्तुलित बनाये रखना पहली आवश्यकता है।

मन, बुद्धि व इन्द्रियों की श्रेष्ठता, पवित्रता व परस्पर सन्तुलन बनाकर श्रेष्ठ कर्म करते रहने का स्वभाव बनाना जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक है अच्छे-बुरे कर्मों का सच्चा ज्ञान होना। श्रीकृष्ण जी की भाषा में कहें तो- 'गहनो कर्मणा गति:' कर्मों की गति बड़ी गहन-गम्भीर है। 'किं कर्म किं अकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहित:'- क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए इसे लेकर बड़े-बड़े क्रान्तदर्शी भी भ्रमित हो जाते हैं। महाकवि भास लिखते हैं - 'कत्तरि: सुलभा लोके विज्ञातारस्तु दुर्लभा:' (स्वप्न ४.७) संसार में कर्म करने वाले तो सर्वत्र सुलभ हैं, सब करते ही हैं, लेकिन ज्ञान-विवेकपूर्वक कर्म करने वाले बहुत दुर्लभ हैं। इसी लिये श्रीकृष्ण कहते हैं- 'कर्मणो हि अपि बोधव्यं बोधव्यं च विकर्मण:' (४.१७) क्या करने योग्य है और क्या न करने योग्य है, इसे भलीभाँति जान लेना चाहिए। अर्जुन के सामने यही समस्या थी, वह अपने न्याय स्थापना क क्षत्रिय-कर्त्तव्य की अनदेखी करके स्वजन-मोह में पड़कर युद्ध से विमुख हो रहा था। कर्म-रहस्य को समझाते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं- 'स्वभाव नियतं कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बियम्' (१८.४७) हमारा स्वभाव (आत्म-चेतना) जो नियत करे, उस कर्म को करने से हमें पाप नहीं लगता। इसी बात को महर्षि मनु के शब्दों में- 'स्वस्य च प्रियमात्मन:' और महर्षि व्यास के शब्दों में- 'आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' कहकर धर्म और धर्म-सर्वस्व कहा गया है। कई बार हमें अर्जुन की तरह जब लोभ-लालच, हठ-दुराग्रह व काम, क्रोध, मोह घेर लेते हैं तो हमें कर्त्तव्य कर्म में हानि दिखती है और अकर्त्तव्य करन में प्रवृत्त हो जात हैं। ऐसा अज्ञान के कारण होता है। इससे बचने के लिए श्रीकृष्ण कहते हैं 'ज्ञानाग्नि सर्व कर्माणि भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन:' हे अर्जुन ज्ञान की अग्नि में डालकर इस कर्म-भ्रान्ति को नष्ट कर डाल। कर्म-रहस्य को भलीभाँति जानने के लिए प्रभु की वेदवाणी का मनोयोग से स्वाध्याय करना चाहिए। महर्षि मनु कहते हैं- 'वेदप्रतिपादितोधर्म: अधर्मस्तद् विपर्यय:।' अर्थात् जो वेद कहते हैं वह धर्म है, इसके विपरीत अधर्म है।

'कर्मकुशलता' का मूलाधार मन, बुद्धि व इन्द्रियों की पवित्रता है, स्वभाव को श्रेष्ठ बनाना ही है। इसके लिए हम श्रीकृष्ण द्वारा बताये हुए गीता में वर्णित उपाय की चर्चा करना अधिक उचित मानते हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं- 'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रं इह विद्यते' अर्थात् ज्ञान के समान हमारे जीवन को पवित्र करन वाला कुछ भी नहीं। महर्षि मनु भी ऐसा ही मानते हैं- 'अद्भिर्गात्राणिशुध्यन्ति मन: सत्येन शुध्यति। विद्यातपाभ्यां भूतात्मा बुद्धि: ज्ञानेन शुध्यति।।' (५.१०९) शरीर जल से शुद्ध होता है, मन सत्याचरण से शुद्ध होता है, विद्या और तप से आत्मा के मल नष्ट होते हैं और बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है। इस प्रकार निरन्तर सत्य का आचरण करें, विद्या-पुस्तकों, वेद आदि शास्त्रों का पठन-पाठन करते हुए तपस्वी जीवन जियें, तप के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं- अपने कर्त्तव्य कर्मों का पालन करते हुए जो व्यक्ति सर्दी-गर्मी, भय-प्रेम, सफलता-असफलता की चिन्ता नहीं करता, कर्त्तव्य पालन में लगा ही रहता है, श्रीकृष्ण

की दृष्टि में वही सच्चा तपस्वी है। बुद्धि की पवित्रता के लिए ज्ञानार्जन करते रहना चाहिए।

प्रश्न शेष है- 'कर्म कौशल' क्यों? श्रीकृष्ण द्वारा गीता में वर्णित कर्म कौशल हमारे सर्व दु:खों की अमोघ औषधि है। ध्यान रहे हमारी सत्य सनातन वैदिक संस्कृति में जीवात्मा की विभिन्न योनियों के माध्यम से चलने वाली मात्रा का पूर्ण पड़ाव परमात्मा की आनन्दमयी गोद-मोक्ष में ही है। वहाँ तक पहुँचने के लिए नरतन में किये जाने वाला योगाभ्यास ही है। महर्षि याज्ञवल्क्य शतपथ ब्राह्मण में लिखते हैं- 'भव तापेन तप्तानां योगो हि परमौषधम्' अर्थात् संसार के दु:खों की परमौषधि योग है। इतना ही नहीं शरीर शास्त्र (आयुर्वेद) के महाज्ञानी महर्षि चरक भी यही मानते हैं- 'योगे मोक्षे च सर्वासां वेदनानामर्वतनम्' अर्थात् योग द्वारा मोक्ष पाकर ही सब दु:ख, सब वेदनाएँ समाप्त होती हैं। गीता के शब्दों में कहें तो बड़ा प्रसिद्ध श्लोक है- 'युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा।।' (६.१७) यहाँ कर्म कुशलता के विविध पक्ष बताते हुए कहा है- आहार-विहार से लेकर सोने-जागने तक, जीवन के हर कर्म, हर चेष्टा मैं जो उपयुक्तता है, अनुकूलता है, नियमबद्धता है, उनका ही योग है, और वही दु:खों को नष्ट करने वाला है। गीता में श्रीकृष्ण द्वारा युद्ध क्षेत्र में दी गई योग की व्यावहारिक-लौकिक परिभाषा (योग: कर्मसु-कौशलम्) ही परलौकिक परिभाषा- 'युञ्जते मनउत मुञ्जते धियो.' के लिए धरातल प्रदान करती है। जो लोक व्यवहार में कर्म कुशलता रूपी योग-विद्या का पालन नहीं करता, वह योग दर्शन प्रणीत समीप प्राप्त कराने वाली योग-विद्या का अधिकारी भी नहीं बन पाता। दूसरे सरल शब्दों में कहें तो आष्टांग योग के प्रथम दो अंग यम-नियम जो कि हमारे लोक, व्यवहार से सीधा सम्बन्ध रखते हैं- उन्हीं को योगिराज- श्रीकृष्ण ने लोक-कर्त्तव्य से न्याय की स्थापना से विमुख होते अर्जुन को गीतोपदेश के माध्यम से समझाया ऋग्वेद में इस तथ्य को बड़े सुन्दर ढंग से सुस्थापित किया है, 'तेन सत्येन मन सा दीध्याना: स्वेन युक्तास क्रतुना वहन्ति।' (७. ९०. ५) वे मनुष्य ही सच्चे मन से परमात्मा का ध्यान कर सकते हैं, जो अपने कर्त्तव्य कर्मों का युक्ति पूर्वक निष्ठा से वहन करते हैं, पालन करते हैं।

'योग: कर्मसु कौशलम्' श्रीकृष्ण का ऐसा विद्युत वचन है कि यह जिस व्यक्ति के मन-मस्तिष्क से प्रवाहित होता हुआ उसके हृदय को छू जाए तो उसके रोम-रोम में कर्त्तव्य भाव और आत्मबल का ऐसा मणि-कांचन सुयोग बने कि वह एक नहीं सैकड़ों महाभारतों का विजेता बन सकता है। कर्म रहस्य की गूढ ग्रन्थियों को सहज भाव से खोल देने की बौद्धिक क्षमता पाकर, अपने कर्त्तव्य कर्मों के पालन में कर्त्तापन से नहीं-कर्त्तव्य भाव से प्रवृत्त होकर मनुष्य जीवन में जो कुछ भी करता है उसके सब कर्म प्रभु-भक्ति के उपकरण बन जाते हैं। ऐसे ही कर्मों के लिए श्रीकृष्ण कहते हैं- 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानव:' (१८.४६) अपने कर्मों से ईश्वर की अर्चना करता हुआ मनुष्य अपने जीवन को सफल बना लेता है। 'योग: कर्मसु कौशलम्' का चमत्कार देखिये जो अर्जुन- 'गाण्डीव संस्रते हस्तात् त्वक् चैव परिदह्यते। न च शक्नोमि अवस्थातुं भ्रमतीव च मे मन:।।' (१.३०) की दुहाई दे रहा था। वही अर्जुन- 'योग: कर्मसु कौशलम्' के विज्ञान को जानकर कह उठता है- ''नष्टो मोह: स्मृति लब्धा त्वत् प्रसादात् मयाच्युत। स्थितोऽस्मि गत सन्देह: करिष्ये वचनं तव।।'' (१८.७६) हे अच्युत! मेरा मोह नष्ट हो गया है आपकी कृपा से मेरी कर्त्तव्य-बुद्धि मुझे प्राप्त हो गई है। अब मेरे सारे सन्देह दूर हो गये हैं, अब मैं आपके वचनों का पालन करूँगा। ये चमत्कार है- योग: कर्मसु कौशलम् का। आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय जनमानस में श्रीकृष्ण के इस- 'योग: कर्मसु कौशलम्' का सही अर्थों में सही व्यक्तियों द्वारा व्यापक प्रचार-प्रसार हो। ऐसा हो सका तो सबका जीवन धन्य हो जाएगा।

वैदिक रश्मि सिद्धान्त पर टिप्पणी की समीक्षा

डॉ. भूपसिंह

परोपकारी पत्रिका के अगस्त द्वितीय २०२३ के अंक में आचार्य रवीन्द्र, हमीरपुर उ.प्र. ने आचार्य अग्निव्रत के सृष्टि उत्पत्ति के रश्मि सिद्धान्त की आलोचना करते हुये रश्मि सिद्धान्त को कपोल कल्पित व वेद-शास्त्रों के अनुसार न होना कहते हुये आचार्य अग्निव्रत को स्वयं भ्रमित होने व दूसरों को भ्रमित करने का आरोप लगाते हुये शास्त्रार्थ करने का आह्वान किया है। रवीन्द्र जी के विवेचना की समीक्षा करने से पहले एक-दो आधारभूत बातों का उल्लेख करना सामयिक लगता है। पहली बात तो यह कि सिद्धान्त सर्वोपरि होता है, सिद्धान्त के सामने किसी की कोई औकात नहीं होती, चाहे वह कोई भी हो। दूसरे ज्ञान की कोई सीमा नहीं है और ज्ञान किसी की बपौती नहीं है। अब लेख में रवीन्द्र जी द्वारा दिये विभिन्न मन्तव्यों की समीक्षा कर ली जावे।

१. ''वेद मन्त्र शब्द स्वरूप हैं, शब्द आकाश का गुण है, वायु के सहयोग से वह शब्द ध्वनि के रूप में हमारे कानों को प्राप्त होता है।''

समीक्षा : शब्द वायु के माध्यम से कान तक आता है, तो वायु में क्या परिवर्तन करता है कि वह वायु हमारे कान से टकराकर हमें ध्वनि का अहसास देता है। सभी जानते हैं कि ध्वनि वायु में बनी तरंगें (कम्पन) हैं, जो कान के पर्दे को कम्पित करती हैं और यही कम्पन आगे रूपान्तरित होकर हमें ध्वनि के रूप में सुनाई देता है। वायु में कम्पन कोई कम्पित वस्तु ही कर सकती है, तो शब्द अपने स्वरूपों में कम्पन ही होगा। शब्द आकाश का गुण है, गुण गुणी के बिना रह नहीं सकता, तो यहाँ दो सम्भावनाएँ हो सकती हैं। यदि शब्द नित्य है, तो आकाश भी नित्य होगा और यदि आकाश नित्य नहीं है, तो शब्द भी नित्य नहीं होगा। यदि आकाश की उत्पत्ति मानें, तो उसके साथ शब्द भी उत्पन्न हो गया और दोनों ही किसी अन्य वस्तु से उत्पन्न हुये। जिस वस्तु से आकाश उत्पन्न हुआ, उसमें शब्द मानना पड़ेगा, तो उस शब्द का स्वरूप क्या मानें, यह रवीन्द्र जी बतायें।

२. ''शास्त्रों में दो प्रकार का शब्द उपलब्ध है- स्फोट और ध्वनि। मन में शब्द का संस्कार शब्द स्वरूप न होकर ज्ञानस्वरूप है। मन में केवल शब्दों के ही नहीं, स्पर्श, रूप आदि के भी संस्कार होते हैं, किन्तु वे सब स्पर्श रूपादि नहीं होते, उनका ज्ञान होता है।''

समीक्षा : मन में शब्द, रूप, स्पर्श के संस्कार ज्ञानस्वरूप हैं, ध्वनि, प्रकाश, दबाव, तापक्रम परिवर्तन आदि के रूप में नहीं हैं। यह बात मानने पर भी यह तो सत्य है कि ये ज्ञान के संस्कारों के वाहक कुछ भौतिक क्रियाएँ ही तो हैं। शब्द संस्कार में बदलने से पहले भी तो कुछ रहा होगा। शब्द की कम्पन, रूप का प्रकाश, स्पर्श का दबाव या तापक्रम परिवर्तन ही तो मन में संस्कार बना होगा। इस प्रकार शब्द, रूप, स्पर्श के संस्कारों का आधार कम्पन, प्रकाश व दबाव ही हैं, तो शब्द को कम्पन मानना निराधार कैसे हो सकता है?

३. '' शब्द आकाश का गुण है, अतः आकाश की उत्पत्ति से पूर्व उसका होना सम्भव नहीं हैं।''

समीक्षा : आकाश की उत्पत्ति कैसे और किस वस्तु से हुई और जिस वस्तु से आकाश की उत्पत्ति हुई, उसमें शब्द था या नहीं और था तो किस रूप में और यदि शब्द नहीं था, तो आकाश बनने पर शब्द गुण कैसे आ गया? यह सम्भव है कि आकाश बनने से पहले आकाश को बनाने वाले घटकों में शब्द किसी और स्वरूप में हो, जैसे कम्प्यूटर या मोबाईल चिप में जानकारी, चिप से पर्दे तक विभिन्न स्वरूपों में होती है।

४. ''शब्द को गुण माना है, इस कारण वह किसी भी पदार्थ का समवायी अर्थात् उपादान कारण नहीं बन सकता।''

समीक्षा : गुण किसी गुणी का ही होता है और जिस गुणी का शब्द गुण है, वह उपादान कारण क्यों नहीं हो सकता?

५. ''शब्दों के परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी चार भेदों की किसी भी आर्षग्रन्थ में चर्चा नहीं है और जिस

ग्रन्थों में इनकी चर्चा है, उनमें इनकी परिभाषा अलग-अलग की हुई है। अतः इनको आधार बनाकर ऐसे शब्द की कल्पना करना, जो प्रलयावस्था में भी विद्यमान हो, वह दर्शन शास्त्रों की परम्परा से विपरीत होने से मान्य नहीं हो सकती।''

समीक्षा : शब्द को आकाश का गुण माना गया है। आकाश जिन अवयवों से बना, उनकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में उनमें स्थित शब्द भी भिन्न-भिन्न स्वरूपों में होगा। पदार्थ का स्वरूप या स्थिति (स्टेज, फेज) बदलने पर शब्द का स्वरूप भी बदलता जायेगा। आचार्य अग्निव्रत जी का ध्वनि के विभिन्न रूपों से इसी स्थिति से अभिप्राय है। यह प्रक्रिया दर्शन विरोधी कैसे है? जैसे उपर्युक्त उदाहरणों में शब्द चिप, मोबाईल सर्किट और पर्दे पर भिन्न-भिन्न स्वरूपों में होता है, इसी प्रकार शब्द पदार्थ की भिन्न अवस्थाओं में भिन्न स्वरूपों में होना सम्भव है, जिनका वर्गीकरण परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी चार भेदों में किया है। यह तो स्पष्ट ही है कि प्रलय अवस्था से सृष्टि प्रक्रिया से गुजरते हुये पदार्थ बहुत सारे परिवर्तनों से गुजरता है। यदि शब्द प्रलयावस्था में विद्यमान नहीं या किसी बाद की अवस्था में उत्पन्न हुआ, तो किस स्टेज पर उत्पन्न हुआ और कैसे उत्पन्न हुआ, यह आचार्य रवीन्द्र जी को अवश्य बताना चाहिए।

६. ''ध्वनि में कम्पन अवश्य होता है, किन्तु स्फोट में कोई कम्पन नहीं हो सकता, क्योंकि वह स्फोट आकाश में स्थित है। आकाश के निरवयवी होने से उसमें कोई कम्पन नहीं हो सकता।''

समीक्षा : आकाश को निरवयवी मानते हो, तो उसकी उत्पत्ति कैसे और किससे हुई, क्योंकि आप पहले कह आये हैं (बिन्दु ३) कि शब्द आकाश का गुण है, अतः आकाश ही उत्पत्ति से पूर्व उसका (शब्द का) होना समभव नहीं है। अब जो वस्तु उत्पन्न होती है, वह निरवयवी नहीं हो सकती।

७. ''कम्पन मात्र से निर्माण नहीं हो सकता, वस्तुओं के स्थान छोड़ने से होता है। कम्पन में वस्तु द्वारा स्थान को पूरी तरह से नहीं छोड़ा जाता।''

समीक्षा : कम्पन करती वस्तु के स्थान छोड़ने में क्या बाधा है? क्या कम्पन करती वस्तु चल नहीं सकती? भौतिकी में परमाणु व अन्य छोटे कण (इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन, फोटोन आदि) कम्पन में होते हुये भी चलते हैं और एक-दूसरे से क्रिया भी करते हैं।

८. ''रश्मि का अर्थ नियन्त्रण करने वाला है। इसमें जबरदस्ती कम्पन लाना उचित नहीं है। ये (आचार्य अग्निव्रत) कहते हैं- स्थूल कम्पन को सूक्ष्म कम्पन से नियन्त्रित करना। निरुक्तकार ने कम्पन के विषय में कुछ भी नहीं कहा था, परन्तु ये इस प्रकार अनर्थ कर रहे हैं।''

समीक्षा : क्या नियन्त्रण करने में स्थान परिवर्तन नहीं होता? क्या कम्पन स्थान परिवर्तन नहीं है? स्थूल कम्पन में बहुत सारी कम्पन मिली हुई रहती हैं। जब घटक कम्पन अपना प्रभाव डालती हैं, तो क्या स्थूल कम्पन प्रभावित नहीं होगा?

९. ''ऐसा लगता है कि इनकी (आचार्य अग्निव्रत की) अत्यन्त विशेष दृष्टि है, प्रमाणों के संकलन के समय इनको जो चाहिये, उसके अतिरिक्त और कुछ इनको दिखता ही नहीं।''

समीक्षा : वेद व ऋषिकृत ग्रन्थों को पढ़ने से जितना लाभ होता है, वह मनुष्यकृत ग्रन्थों के पढ़ने से नहीं होता, ऐसा कहा जाता है और यह बात ठीक भी है। इसके दो कारण हैं- पहली बात यह कि ऋषि की जानकारी साधारण मनुष्य की जानकारी से गहरी होती है और दूसरी बात यह कि ऋषि की बात सारगर्भित होती है, अर्थात् बहुत सारी जानकारियों को समाहित किये होती है। वेद की बात ऋषि की बात से भी अधिक सारगर्भित होती है, तो प्रकरण अनुसार आचार्य अग्निव्रत किसी प्रमाण का अभिप्राय इस प्रकार का लेते हैं, जो किसी प्रक्रिया की ठीक से व्याख्या करता है, तो इसमें दोष क्या है? यदि इनका अभिप्राय मनमाना होगा, तो व्याख्या की श्रृंखला निश्चित रूप से रुक जायेगी और इनको मनमाना अर्थ छोड़ना पड़ेगा। यदि आचार्य रवीन्द्र जी को इनकी सम्पूर्ण व्याख्या (रश्मि सिद्धान्त) गलत लगती है, तो जो मनमाने अर्थ अग्निव्रत जी ने लिये हैं, उनको छोड़ कर सही अर्थ लेकर सृष्टि उत्पत्ति की वैकल्पिक व्याख्या प्रस्तुत करनी चाहिये। यदि ऐसा नहीं कर सकते, तो इनकी आलोचना महज दुराग्रह

ही माना जायेगा।

१०. ''बिना सम्बन्ध के ऋषियों के वाक्यों को प्रस्तुत करके अपनी बात को सिद्ध करने का असफल प्रयास किया है।''

समीक्षा : रवीन्द्र जी ऊपर कह रहे हैं- इस प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में आंशिक सम्बन्धों का भी पूर्ण सम्बन्धों की तरह प्रयोग बहुत ज्यादा देखा जा सकता है। तो आचार्य अग्निव्रत जी यदि ऐसे सम्बन्धों का प्रयोग करते हैं, तो गलत क्या है? यदि उनके सम्बन्धों के प्रयोग किसी प्रक्रिया की क्रमिक व तर्कपूर्ण व्याख्या करते हैं, तो गलत क्या है?

११. ''स्वामी दयानन्द के वेद भाष्य से रश्मि का अर्थ रज्जु अर्थात् रस्सी दिखाते हैं, किन्तु अपनी शैली के अनुसार वहाँ भी जबरदस्ती कम्पन को जोड़ देते हैं। इस प्रकार वैदिक रश्मि सिद्धान्त को स्थापित करने का असफल प्रयास किया है। यह सिद्धान्त वास्तव में कपोल कल्पित है, इसका कोई शास्त्रीय आधार नहीं है।''

समीक्षा : क्या शास्त्रीय आधार पर कोई अन्य प्रक्रिया सृष्टि उत्पत्ति की उपलब्ध है? यदि अन्य शास्त्रीय प्रक्रिया उपलब्ध है, तो अब तक किसी दर्शन या वेद के विद्वान् द्वारा उसे स्थापित क्यों नहीं किया गया? आचार्य अग्निव्रत ने बिना शास्त्रीय प्रमाणों के अपनी रश्मि थ्यौरी को विस्तार से रखा है, तो अन्य विद्वानों द्वारा शास्त्रों के प्रमाणों के सहारे भी कोई थ्यौरी क्यों नहीं दी गई? भूतकाल में न सही, अग्निव्रत की थ्यौरी आने के बाद तो सही थ्यौरी प्रस्तुत करनी चाहिये। अग्निव्रत की रश्मि थ्यौरी को गलत बताने का मतलब है, रवीन्द्र जी या अन्य किसी विद्वान् को ठीक थ्यौरी मालूम है और उस ठीक थ्यौरी को पब्लिक करना चाहिये। यदि रश्मि थ्यौरी को गलत बताकर ठीक थ्यौरी नहीं दी जा रही है, तो यह स्वाभाविक और सहज निष्कर्ष होगा कि अग्निव्रत जी की रश्मि थ्यौरी की आलोचना दुराग्रहवश की जा रही है।

१२. '' सत्व, रजस्, तमस् की साम्यावस्था को प्रकृति कहते हैं। यह अवस्था केवल क्षण भर के लिये रहती है यह प्रलयकाल के मध्य में होती है। ऐसी स्थिति में परमात्मा इस प्रकृति में कुछ संक्षोभ के द्वारा विषमता उत्पन्न करता है। इस प्रकार महत् नामक तत्त्व का आविर्भाव होता है। इसी क्रम से अहंकार, मन, इन्द्रियाँ, तन्मात्राएँ एवं पंच महाभूतों का निर्माण होता है।''

समीक्षा : साम्यावस्था में ईश्वर द्वारा किया गया संक्षोभ क्या हलचल के रूप में नहीं होगा और क्या इस हलचल को कम्पन या रश्मि नहीं कह सकते? आगे का रूपान्तरण महत्-मन-इन्द्रियाँ-तन्मात्रायें-पंच महाभूत क्या इन्हीं कम्पनों के रूपान्तरण नहीं हो सकते? यदि परमात्मा के द्वारा आद्य अर्थात् मूल पदार्थ का संक्षोभ कम्पन के रूप में नहीं होता, तो उस संक्षोभ का स्वरूप क्या है? यहाँ संक्षोभ का दूसरा रूप बताये बिना ही कम्पन को नकारना केवल दुराग्रह है।

१३. ''पंच महाभूतों की उत्पत्ति के बाद इनमें से आकाश को छोड़कर शेष चार महाभूतों के परमाणुओं को एकत्रित करके परमात्मा एक महद् अण्ड का निर्माण करता है। यह द्वितीय चरण है। उस महद् अण्ड के फटने से उसके अन्दर से सर्वप्रथम अग्नि उत्पन्न हुई। इसी के साथ देवताओं की तथा लोकों की उत्पत्ति का विस्तार से वर्णन वेद तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में उपलब्ध है।''

समीक्षा : पंच महाभूतों में आकाश को छोड़कर शेष चार महाभूतों के परमाणुओं को एकत्रित करके बहुत बड़े अण्ड का निर्माण किया। बाद में वह अण्ड फट गया और इसी से सभी देवता तथा लोकों का निर्माण हुआ। चार महाभूतों में पृथ्वी, जल, वायु भी हैं, तो ये तीन महाभूत तो अण्ड बनने से पहले ही मौजूद थे, तो बाद में अण्ड फटने पर इनका निर्माण होने की बात निराधार ही है। अण्ड के फटने से महाभूत व लोकों के निर्माण की कथा आधुनिक विज्ञान की बिग-बैंग थ्यौरी का समर्थन कर रही है। विस्फोट होने के बाद क?या महाभूत एकदम बन गये? महाभूतों के बनने की प्रक्रिया को अग्निव्रत जी ने रश्मि सिद्धान्त के आधार पर व्याख्या की है, तो क्या रवीन्द्र जी या अन्य वेद-शास्त्रों के ज्ञाता विद्वान् ने दूसरी व्याख्या दी है? केवल गलत कहना उचित नहीं है, जब तक गलत के स्थान पर ठीक समाधान न दिया जाये। ऐसा करना दुराग्रह के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यदि यह कहें कि पंचमहाभूत अण्ड में मौजूद नहीं थे, उनके परमाणु विद्यमान थे, तो इन विभिन्न प्रकार के परमाणुओं के बनने की प्रक्रिया क्या थी? आप कहते हैं कि उस अवस्था में होने वाली प्रक्रियाओं

के बारे में पता अनुमान प्रमाण से भी नहीं किया जा सकता, तो यह बात आधुनिक विज्ञान की बिग-बैंग थ्यौरी वाली बात है, क्योंकि आधुनिक विज्ञान से जब पूछा जाता है कि ब्रह्माण्ड का सम्पूर्ण पदार्थ बिन्दु आयतन में कैसे एकत्रित हुआ या किसने एकत्रित किया, तो उनका कहना भी यह है कि इस अवस्था का कुछ पता नहीं है।

१४. ''इसके साथ सर्वप्रथम उत्पत्ति विद्युत् की हुई है, ऐसा कहना परमाणु के अभाव के कारण आधारहीन है।''

समीक्षा : सूक्ष्म वस्तु का निर्माण पहले होता है, बाद में उससे स्थूल का निर्माण होता है। परमाणु से विद्युत् सूक्ष्म है, तो यह कहना कि परमाणु के अभाव में विद्युत् पैदा नहीं हो सकती, रवीन्द्र का ऐसा कहना सूक्ष्म से स्थूल वाले सिद्धान्त की अनभिज्ञता ही है। विद्युत् भौतिक अग्नि से भी सूक्ष्म है। मूल सिद्धान्त को न जानने के कारण दुराग्रहवश ये श्रीमान् जी आचार्य अग्निव्रत जी को गलत भ्रमित और अपराधी कह रहे हैं। सृष्टि प्रक्रिया के विभिन्न चरणों को स्पष्ट च अलग-अलग न समझने के कारण अग्निव्रत जी पहले चरण को तीसरे चरण के साथ गड्ड-मड्ड करके स्वयं भ्रमित हो रहे हैं और दूसरों को कर रहे हैं, तो इसका समाधान तो रवीन्द्र जी के पास होना चाहिये और उसकी स्पष्ट प्रक्रिया विद्वानों और जनसाधारण को समझा देनी चाहिये, ताकि लोगों को अग्निव्रत जैसे धोखेबाजों से बचाया जा सके।

१५. ''वैदिक साहित्य में यह अत्यन्त प्रसिद्ध है कि देवताओं की उत्पत्ति में सर्वप्रथम अग्नि की उत्पत्ति हुई थी। आगे में दिव्य वायु को अंहकार मानते हैं और उसी को मन तथा महत् तत्त्व मानते हैं अर्थात् इनकी दृष्टि में अहंकार, मन एवं महत्त्व तीनों एक ही हैं।''

समीक्षा : यहाँ सृष्टि उत्पत्ति प्रकरण में देवताओं से अभिप्राय पंच महाभूतों से किया जाये, तो क्रम आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी का है। स्पष्ट है कि वायु अग्नि से सूक्ष्म है और अग्नि जल से सूक्ष्म व वायु से स्थूल है, तो आचार्य अग्निव्रत जी वायु को अग्नि से पहले मानते हैं, तो गलत नहीं हैं। इन सब देवताओं का मूल उपादान महत्-अहंकार तथा मन की सूक्ष्म अवस्था को दिव्य वायु कह देना सिद्धान्त विरुद्ध कैसे है? अग्निव्रत जी महत्-अहंकार तथा मन को अलग ही मानते हैं, एक नहीं मानते, लेकिन सभी भूतों के निर्माण में इनका होना मान कर इन्हें दिव्य वायु कहा है। अग्निव्रत जी सांख्य के विरुद्ध मत स्थापित कर रहे हैं, ऐसा तो कदापि नहीं हैं।

१६. ''आगे इनकी चर्चा से यह भी प्रतीत होता है कि इनका कथन पूर्ण रूप से आधुनिक लोगों के सृष्टि उत्पत्ति सम्बन्धी काल्पनिक सिद्धान्तों के आधार पर खड़ा है।''

समीक्षा : आधुनिक लोगों के सृष्टि उत्पत्ति सम्बन्धी सिद्धान्त क्या है, यह रवीन्द्र जी को बताना चाहिये। यदि आधुनिक लोगों के आधुनिक विज्ञान को मानते हैं, तो आधुनिक विज्ञान सृष्टि उत्पत्ति का बिग-बैंग सिद्धान्त मानते हैं, जिसका आचार्य अग्निव्रत जी स्पष्ट विरोध करते हैं। आधुनिक विज्ञान के अतिरिक्त सृष्टि उत्पत्ति के किन सिद्धान्तों की नकल अग्निव्रत जी कर रहे है, जिनसे रवीन्द्र जी सहमत नहीं है, यह स्पष्ट करना अति आवश्यक है, नहीं तो आचार्य अग्निव्रत जी की कटैगरी मनमाने ढंग से निर्धारित करने जैसी निराधार आलोचना करना बहुत निम्र कोटि का कुर्तक है।

१७. ''हम दर्शन योग महाविद्यालय की परम्परा के विद्वान् हर वर्ष आपस में मिलकर परस्पर अनेक विषयों में जहाँ मतभेद हैं, शास्त्रार्थ करते हैं। किन्तु मतभेद के कारण आपस में मनभेद नहीं होता''

समीक्षा : सिद्धान्त रूप में तो रवीन्द्र जी की बात बिलकुल ठीक है, पर व्यवहार में पूर्णरूप से विपरीत है। आचार्य अग्निव्रत जी से कोई मतभेद है, तो उनके साथ पत्र व्यवहार, दूरभाष या आकर आमने-सामने चर्चा करनी चाहिये थी, न कि पत्रिका में लेख डाल कर आम पाठक और विशेषकर आर्यजनों के बीच उनको गलत, कपोल-कल्पित, भ्रामक, वेद शास्त्रों का विरोधी, शास्त्रार्थ व तर्क से भागने वाला स्थापित करना और मनभेद न रखने का उपदेश देना, इसको क्या कहें, मैं कहना नहीं चाहूँगा। निश्चित रूप से रवीन्द्र जी का कार्य आर्यों में भ्रम पैदा करने वाला और आर्यसमाज के विरोधियों को मौका देने वाला है।

रवीन्द्र जी के लेख: 'वेद मन्त्रों से संसार की उत्पत्ति की विवेचना' उपर्युक्त सभी बिन्दुओं में सैद्धान्तिक व

व्यवहारिक अन्तर्विरोध हैं। स्पष्ट है कि इनको सिद्धान्तों की स्पष्टता नहीं है और आचार्य अग्निव्रत जी को गलत ठहराना ही एकमात्र उद्देश्य लगता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का सबसे अधिक बल इसी बात पर रहता था कि वेद की स्थापना हो, वेद की ओर लौटो। यह भी सत्य है कि वेद से विमुख होने का सबसे बड़ा कारण वेद की गलत व्याख्या करना रहा और महाभारत काल के बाद दयानन्द ऋषि ही पहले महापुरुष थे, जिन्होंने वेद की ठीक व्याख्या करके वेद की पुनर्स्थापना की। ऋषि के वेद की स्थापना के कार्य को पूरा करने के दो ही रास्ते हैं-

पहला यह कि व्यवस्था आपके हाथ में हो। वर्तमान में व्यवस्था आप के हाथ में नहीं है, बल्कि वेद की गलत व्याख्या करने वालों के हाथ में है। दूसरा विकल्प यह है कि वैज्ञानिक जगत् में वेद को स्थापित किया जाये, क्योंकि एक बार वैज्ञानिक जगत् में वेद की स्थापना हो जाती है, तो जन साधारण और राज्य व्यवस्था में भी स्थापना हो जाती है।

जैसे महाभारत काल के बाद ऋषि दयानन्द पहले महापुरुष थे, जिन्होंने वेद की ठीक व्याख?या की, उसी प्रकार यह कहा जा सकता है कि आचार्य अग्निव्रत महाभारत के बाद पहले विद्वान् हैं, जिन्होंने वेद से विज्ञान के एक अंश (सृष्टि उत्पत्ति प्रक्रिया) को निकाल कर वैज्ञानिकों के सामने रखा और वैज्ञानिक जगत् में यह स्थापित करने का सफल प्रयास किया है कि वेद में विज्ञान है और वेद विज्ञान आधुनिक विज्ञान से गहरा, पूर्ण और कल्याणकारी है। आचार्य अग्निव्रत जी ने विश्व के उच्च कोटि के विज्ञान शोध संस्थानों के वैज्ञानिकों के सामने वेद विज्ञान को साहसपूर्वक चुनौतीपूर्ण ढंग से रखा है और सफलता भी पाई है। आचार्य अग्निव्रत न केवल वेद की स्थापना का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं, अपितु ये सर्वांगीण दृष्टि से विचार करने वाले और जनहित में अपने विचार रखने वाले प्रखर चिन्तक भी हैं। किसान आन्दोलन, कोरोना टीकाकराण, निजीकारण, विदेशी निवेश, अग्निपथ जैसे मुद्दों पर जहाँ आर्यनेता व विद्वान् चुप थे, वहाँ आचार्य अग्निव्रत खुलकर जनहित में आवाज बुलन्द कर रहे थे। अब तो आचार्य जी ने खुली घोषणा कर दी है कि वेद व आर्ष ग्रन्थों पर जिसको जो आपत्ति है, जो आक्षेप लगाने हैं वे लगा ले, उन आक्षेपों का उत्तर आचार्य अग्निव्रत देंगे, ताकि वेद व आर्ष ग्रन्थों के बारे में कोई भ्रान्ति नहीं रहे। क्या इससे बड़ी वेद व आर्ष ग्रन्थों के प्रति निष्ठा और हो सकती है? यह हम आर्यों को ईश्वरीय उपहार है कि हमारे पास अग्निव्रत जैसा मनीषी है। हमें आचार्य अग्निव्रत का प्रत्येक प्रकार का सहयोग करके ईश्वरीय उपहार का सम्मान करना चाहिये।

से. नि. एसोशिएट प्रोफेसर भौतिकी (भिवानी)

परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम

०१.	डॉ. धर्मवीर स्मृति दिवस	-	०६ अक्टूबर-२०२३
०२.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	२९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर-२०२३
०३.	ऋषि मेला	-	१७, १८, १९ नवम्बर-२०२३
०४.	सृष्टि सम्वत् की एकरूपता संवाद	-	१६ व १७ दिसम्बर-२०२३

कृपया शिविर में भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थी पूर्व से ही प्रतिभाग की सूचना दें।

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३**

ज्ञानसूक्त - ०२

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी श्रृंखला में ऋग्वेद के प्रथम सूक्त 'ज्ञानसूक्त' की व्याख्यान माला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।
-सम्पादक

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः।।

अक्टूबर प्रथम २०२३ **ज्ञानसूक्त**

इस वेद ज्ञान की गंगा मं हम अवगाहन कर रहे हैं और उन मन्त्रों को देख रहे हैं, विचार कर रहे हैं, उनका अर्थ जान रहे हैं जो हमारे लिए इस वेद ज्ञान के माध्यम से ईश्वर ने प्रदत्त किए हैं, ऋषियों ने उनका व्याख्यान किया है, विद्वानों ने उसकी व्याख्या लिखी है, उपदेशकों ने उसका उपदेश दिया है, आचार्यों ने उन्हें पढ़ाया है। जो कालान्तर में हमको उपलब्ध नहीं थे वो ऋषि दयानन्द ने उपलब्ध कराये हैं और विद्वानों के भाष्य, विवेचन, व्याख्यान उन पर हुए हैं। हम ऋग्वेद के १०वें मण्डल के ७१वें सूक्त की, जिसे ज्ञान सूक्त कहते हैं, जिसमें ११ मन्त्र हैं, की चर्चा कर रहे हैं।

इन मन्त्रों का ऋषि बृहस्पति और इन मन्त्रों का देवता ज्ञान है। उसके माध्यम से, अर्थात् ज्ञान देने वाला क्या कह रहा है, जिन्होंने इसको देखा हैं, उन्हें इसमें क्या मिला है, क्या पाया है वो इसके मन्त्रों में बताया है, हमने मन्त्र देखा और पीछे चर्चा की थी कि संसार में दो तरह का ज्ञान है- एक स्वाभाविक ज्ञान है और एक नैमित्तिक ज्ञान है और उस नैमित्तिक ज्ञ्ज्ञ का भागी, अधिकारी, सामर्थ्यवान केवल मनुष्य है, इसलिए वो स्वाभाविक ज्ञान से भिन्न होने से हर मनुष्य में अलग-अलग दिखाई देता है। जो स्वाभाविक है, वो सब मनुष्यों में समान है और वो सबके लिए उपयोगी है। लेकिन हमारे पास जो नैमित्तिक ज्ञान है वो सबका अलग-अलग है। उसका हम कभी उपयोग करते हैं, कभी नहीं करते हैं। कितना करते हैं, कितना नहीं करते हैं, यह अलग बात है। तो यह जो भिन्नता है, यह जो सबके पास अलग-अलग होता है, यह बता रहा है कि यह स्वाभाविक नहीं है, स्वाभाविक नहीं है इसलिए मेरे अन्दर का नहीं है। यदि मेरे अन्दर का होता तो मेरे अन्दर सदा रहता, तो स्वाभाविक होता। इसलिए इसे जब मैं किसी से प्राप्त करता हूँ तो मुझे मिल जाता है, मैं भूल भी सकता हूँ और प्राप्त नहीं होता तो मेरे पास नहीं भी होता है। तो इसलिए उसका जो देने वाला है, उसने दिया और हमारे जैसे मनुष्यों को मिला तो सामान्य रूप से तो हमारी समझ में आ जाता है कि कोई भी ज्ञान जो नैमित्तिक है वो जिसके पास है, हम उससे सीख लेते हैं और वो हमें आ जाता है, हमें प्राप्त हो जाता है। हम उसको अपनी बुद्धि से, संसार को देखकर, पुस्तकों को पढ़कर, उपदेशों को, प्रवचनों को सुनकर खोज करके बढ़ाते रहते हैं। तो प्रश्न यह पैदा होता है कि यहाँ तो हमको समझ में आ रहा है कि कोई बता रहा है, कोई सुन रहा है, किसी के पास है, किसी को दिया जा रहा है, लेकिन मूल समस्या हमारी उत्पन्न तब होती है जब हमारे सामने यह प्रश्न होता है कि यदि नैमित्तिक है तो मनुष्य का तो नहीं है, प्राणियों के होने का प्रश्न होता है कि यदि नैमित्तिक है तो

मनुष्य का तो नहीं है, प्राणियों के होने का प्रश्न ही नहीं है। यह मनुष्य का नहीं है तो फिर मनुष्य के पास आया कैसे? हम यह तो देख रहे हैं कि मनुष्य से मनुष्य को मिल रहा है। यह संसार में हम प्राय: देखते हैं, किसी मनुष्य के पास है, दूसरा मनुष्य उसे सीखता है और उसे वह ज्ञान प्राप्त होता है और वो दूसरे को सिखा देता है। तो यह पता लगा, नैमित्तिक ज्ञान जिसके पास होता है उससे सीखा जाता है, जिसके पास नहीं होता है, वह दूसरे से सीखता है, यह क्रम चल रहा है, हमारी समझ में बहुत अच्छी तरह आ रहा है। यहाँ हमें कोई कठिनाई भी नहीं है। लेकिन कठिनाई तब होती है, कि हर चीज जो दूसरे से मिल रही है वो दूसरा कौन है? यहाँ तो मनुष्य है दूसरा, लेकिन ज्ञान तो मनुष्य से भिन्न किसी दूसरे के पास है, तो वो कहाँ से, कैसे आया यह हमारी मूल समस्या है। पहले पहल इस ज्ञान को किसने दिया और किस मनुष्य ने उसे कैसे लिया। उसका बोलने वाला, बताने वाला कौन है और उसका पाने वाला कौन है और उसने कैसे पाया। तो हमारे यहाँ इसमें कोई विवाद नहीं है कि इस ज्ञान का जो आदि स्रोत है वो परमेश्वर है, क्योंकि जिसका काम सम्पूर्ण है उसका ज्ञान सम्पूर्ण है। हम कोई काम करते हैं तो कहीं न कहीं कोई त्रुटि रह जाती है। उससे पता लगता है कि हमारे ज्ञान में कमी है। कभी हम भूल जाते हैं, कभी हमें पता नहीं होता है। हम कोई काम करने लगते हैं, कुछ छूट जाता है। तो इसलिए हमारा काम काम अधूरा है तो पता लगता है कि हमारा ज्ञान भी अधूरा है। इसलिए उसमें घटना बढ़ना होता रहता है। लेकिन ऐसा कौन सा काम है जिसमें अधूरापन नहीं है। तो हम संसार को देखते हैं, तब अनुभव करते हैं कि संसार के निर्माण में कहीं कोई त्रुटि नहीं है। इसमें जहाँ, जब जो होना चाहिए वो हो रहा है। मनुष्य को, प्राणि को जिन चीजों की आवश्यकता है वो इसमें विद्यमान हैं। जो व्यक्ति इनसे लाभ उठाते हैं, इनको जानते हैं और इसलिए पता लगा है कि यह संसार क्योंकि मेरा बनाया हुआ नहीं है। संसार में मेरे द्वारा बनायी गयी वस्तुओं में मेरा ज्ञान झलकता है। मेरा ज्ञान अधिक है तो वस्तु बड़ी उत्कृष्ट दिखाई देती है और मेरे ज्ञान में त्रुटि होती है तो वस्तु में गड़बड़ दिखाई देती है। एक अच्छा मिस्त्री, एक अच्छा करीगर वस्तु को अच्छी बनाता है। एक अच्छा जानकार किसान बहुत अच्छी खेती करता है। एक बहुत अच्छा अध्यापक बहुत अच्छी तरह पढ़ाता है। एक अच्छा उपदेशक ज्ञान को बहुत अच्छी तरह से प्रस्तुत करता है। तो जिसके पास जैसा है, वो वैसा प्रस्तुत करता है। तो जिसके पास कम है उसका प्रस्तुतिकरण कम है। जो अज्ञानी है उसका प्रस्तुतिकरण भी अज्ञान से युक्त है। जिसका प्रस्तुतिकरण अच्छा है उसके पास ज्ञान अधिक है। यह बात निश्चित है कि जो व्यक्ति जिस वस्तु को बना रहा है, उसके ज्ञान की कसौटी वो वस्तु है। अर्थात् उस वस्तु में जितनी योग्यता, गुण, सामर्थ्य, उपयोगिता है, निश्चित रूप से उसके बनाने वाले में होती है। तो जो वस्तु बहुत अच्छी बनी है, सम्पूर्ण बनी है, बिना त्रुटि की बनी है तो आपको यह भी स्वीकार करना होगा कि उसका बनाने वाला भी त्रुटि रहित है, सम्पूर्ण ज्ञानों से युक्त है। तो इस विशाल संसार को जब हम देखते हैं और इस ज्ञान का मूल्यांकन करते हैं तो इस असीम ज्ञान को किसके पास ढूँढेगे तो निश्चित रूप से यह ज्ञान वस्तु में है तो वस्तु के बनाने वाले में भी देखेंगे। तो पता लगता है कि संसार के इस ज्ञान को देने वाला बनाने वाला, संसार का बनाने वाला है, क्योंकि संसार में ज्ञान भरपूर है इसलिए उसके पास भी ज्ञान पूरा है। इसको हम योग दर्शन के सूत्र से समझते हैं, वो सर्वज्ञ है यचही उसकी सबसे बड़ी विशेषता है। तो उसकी जो सर्वज्ञता है उसका ठीक उल्टा है हमारी अल्पज्ञता है। तो ज्ञान का जो प्रवाह है वो किधर से किधर जाएगा, अल्पज्ञता से सर्वज्ञता की ओर जाएगा या सर्वज्ञता से अल्पज्ञता की ओर जाएगा। हमारी समझ में आता है कि चीज अधिक से कम की ओर आती है। ऊँचाई से नीचे की ओर आती

है, नीचे से ऊपर की ओर नहीं जाती। तो ज्ञान निश्चित रूप से सर्वज्ञता से अल्पज्ञता की ओर ही बढ़ेगा। तो उसके अल्पज्ञता की ओर आने से ही पूर्ति होगी। तो पूर्ति अधिकता से होती है इसलिए वहाँ से आएगा और पूर्ति अलप में होती है इसलिए वहाँ संग्रहीत होगा। तो इसलिए इसका देने वाला ईश्वर है, जिसका ज्ञान पूर्ण है और इसका प्राप्त करने वाला वो है जिसकी आवश्कता है। आवश्यकता उसको होती है जिसके पास होता नहीं है। तो इस दृष्टि से जब हम विचार करते हैं तो ईश्वर उस ज्ञान का देने वाला है। देने वाला भी है तो पहली चीज यह है कि उसको देने की आवश्यकता है और वो दे रहा है तो कैसे देगा? तो उसने संसार को दिया है, वस्तु को दिया है, तो यह ज्ञान ही तो है। अर्थात् यदि किसी ने मुझे मोटर बनाकर दी है तो उसने अपना ज्ञान ही ता मुझे हस्तान्तरित किया है। मुझे उस मोटर के माध्यम से जो काम करना है वो काम मुझे उस मोटर के माध्यम से जो काम करना है तो काम मुझे उस मोटर को देखकर ही तो मिलता है। उस मोटर को चलाकर के जब मैं ले जाता हूँ तो वह मोटर मुझे काम आती है मेरे ज्ञान से। तो इसलिए संसार में जो ज्ञान है वो सारा प्रकृति में पहले से बिखरा पड़ा है। मुझे चाहिए क्या इस प्रकृति का उपयोग, इसका उपयोग कैसे पता लगेगा? प्रकृति के पदार्थ स्वयं बता रहे हैं। मुझे अन्धकार चाहिए तो मैं प्रकाश से भागता हूँ, सूरज से हटता हूँ। मुझे गर्मी से बचना है तो मैं छाया में जाता हूँ। मुझे छाया और गर्मी स्वयं बता रहे हैं कि मुझे क्या करना है। कितना सुन्दर ज्ञान देने का संसार का प्रकार है। संसार की वस्तु है, देखकर खाने की इच्छा होना यह मेरे भूख के निवारण का उपाय है, ज्ञान है। इन्द्रियाँ मुझे मिली है, यह कड़वा है, खट्टा है, खारा है, अच्छा है, शरी को बीमार करता है, स्वस्थ करता है। मैं तो यह समझता हूँ कि शायद मुझे कोई बताएगा कि ऐसा है, तब मैं समझता हूँ कि इसने मुझे ज्ञान दिया लेकिन वस्तु स्थिति में तो जिसने भ उस ज्ञान को पहले लिया तो वस्तु से ही लिया, वस्तु से ही सीखा। आप कहते हैं न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त की खोज की। खोज कैसे की, क्या पहले था नहीं? फल आज नहीं गिरता, पहले नहीं गिरा, संसार में हर वस्तु गिरती हुई दिखाई दे रही है। कोई इस ज्ञान को पकड़ा है, कोई देर से पकड़ता है, कोई नहीं पकड़ता। तो पहली चीज है कि वो परमेश्वर जब ज्ञान दे रहा है तो यह चिन्ता हमको नहीं होनी चाहिए कि कैसे दे रहा है। संसार में शब्द हो रहा है, शब्द से दे रहा है, संसार में रूप है, रूप से दे रहा है, संसार में गन्ध है गन्ध से दे रहा है, संसार में रस है, रस से दे रहा है। बस मुझे उसको लेने की आवश्यकता है। संसार में ज्ञान बिखरा पड़ा है। अन्त क्या है कि इस बिखरे हुए ज्ञान को कभी मैं अनायास समझता हूँ, कभी कोई मुझे समझाता है, क्योंकि सब बातें सदा मेरी समझ में नहीं आतीं। इसलिए कभी - कभी मुझे किसी बात को समझाने वाले की आवश्यकता पड़ती है तो जैसे यहाँ समझाने वाले की आवश्यकता होती है, तो पहली बार भी मुझे कोई समझाने वाला मिला होगा, तब मेरे इस अधूरेपन को किसी ने पूरा किया होगा। कैसे किया होगा? उसके लिए मनु महाराज की एक सुन्दर पंक्ति है - सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक्-पृथक्। वेद शब्देभ्य: एवा दौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे। इस संसार में मनुष्य हैं, प्राणी हैं और इस संसार में इनके उपयोग की वस्तुऐं हैं, सारा संसार है, पृथ्वी है, आकाश है, जल है। अब ये दोनों जब एक-दूसरे के सामने उपस्थित होते हैं तो इनके जो अन्दर की इच्दा है, आवश्कता है, उसकी पूर्ति बाहर ढूँढना हमारा स्वभाव है। तो हम देखते हैं अन्दर की एक जो क्रिया या इच्छा है, वो इच्छा बाहर किस वस्तु से पूरी होती है। उन दोनों में क्या सम्बन्ध है, क्या समानता है, क्या गुण है जिसके कारण से वो उसका पूरक होता है। तो सामान्यरूप से तो हमारी आवश्कतायें प्रेरित करती हैं वैसा करने के लिए। लेकिन यदि हमने पहली बार सीखा है तो दोबारा जब मेरे पास कोई व्यक्ति

आता है, मेरा बच्चा आता है, मेरा शिष्य आता है तो मैं अपनी बात उसको बताता हूँ, उसको समझाता हूँ। इसके लिए उसको वैसा प्रयत्न नहीं करना पड़ता जैसा मैंने पहली बार किया था, परीक्षण का किया था, उपयोग का किया था, उसके हानि-लाभों को सहने का किया था। आज भी हमारे मन में इच्छा होत है, जानें, तो बहुत सारे लोगों का बलिदान हो जाता है उसके जानने में समझने में। तो उस परिस्थिति से बचाने के लिए हमारे पास जो साधन है उसको हम वेद कहते हैं। तेा मनु महाराज ने कहा कि पहले इस संसार में जो सामान है और इनका जो उपयोग है उसको समझने के लिए, परमेश्वर ने वस्तुओं के नाम और कर्मों को हमें समझाया है, क्योंकि नाम के बिना तो हम वस्तु को पहचान नहीं सकते और कर्म के बिना उसका उपयोग नहीं कर सकते। एक वस्त है, नाम तो हमें पता लग गया लेकिन वो किस काम में आती है यह पता न लगा तो उस नाम के होने का लाभ नहीं। तो किसी वस्तु के बारे में हमें जब कोई चीज बतायी जाएगी तो कम से कम दो चीजें बतानी होंगी और तीसरी चीज के लिए वह स्वयं उत्तरदायी होगा। तो क्या बताना होगा- और इतना ही नहीं, पृथक्-पृथक्। तो वस्तु का नाम, वस्तु के कर्म अलग-अलग रूप से हमें बताए जाते हैं, बताए गए हैं। वो हमें वेद न बताए हैं, यह बात जो मनु ने कही है उसको हम इस ज्ञान सूक्त के मन्त्रों से समझ सकते हैं।

ऋषि मेला-२०२३ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला १७, १८ व १९ नवम्बर (शुक्रवार, शनिवार व रविवार) २०२३ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्यजगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की दुकान लगती हैं। इस वर्ष से स्टॉल किराया २०००=००रूपये प्रति स्टॉल किया गया है। खुले में या अपनी इच्छानुसार स्टॉल लगाना निषिद्ध रहेगा। आप अपना पूर्ण सहयोग देकर इस कार्य में सहयोग करावें। जिन महानुभावों की पहले राशि जमा होगी उस क्रम से स्टॉल का निर्धारण होगा। ऋषि मेला-२०२३ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन में तीन आधार रहेंगे- १- आर्य धार्मिक पुस्तक, २- हवन सामग्री, ओ३म् ध्वज आदि, ३- दवाईयाँ। आपको जितनी स्टॉल की आश्यकता है उसी अनुरूप राशि बैंक ड्रॉफ्ट या नगद या ऑनलाइन जमा करावें।

स्टॉल सुविधाः- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**-७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- १. स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक को राशि की रसीद दिखाकर स्टॉल संख्या प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित की जायेगी। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी। **नोटः**- किसी प्रकार का अवैदिक साहित्य एवं सामग्री न हो अन्यथा उचित कार्यवाही सम्भव होगी।

सम्पर्क-देवमुनि- ७७४२२२९३२७

संस्था समाचार

प्रातः काल यज्ञोपरान्त प्रवचन के क्रम में आचार्य कर्मवीर ने गुरु पूर्णिमा के अवसर पर बताया कि परमात्मा ही हमारे सबसे बड़ा गुरु हैं। उस गुरु से पढ़कर ही अन्य गुरु बने हैं। हमें उनका भी यथोचित सम्मान करना चाहिए। समाज में जो पाखण्डी गुरु हैं उनकी हमें उपेक्षा भी करनी चाहिए, नहीं तो सच्चे गुरु का लाभ नहीं ले पाएंगे।

ब्रह्मचारी इन्द्र ने जिनका पूर्व नाम ब्र. अभिषेक था। उन्होंने बताया कि हमें बार-बार मनुर्भव तुम मनुष्य बनो ऐसा उपदेश क्यों दिया जाता है? हम तो मनुष्य ही हैं। पर नहीं, शास्त्रकारों ने कहा है कि आहार, निद्रा, भय, मैथुन यह सब पशु और मनुष्य में समान है। धर्म हममें विशेष है। इसलिए हमें धार्मिक होना चाहिए। हमें अपने दुष्ट आचरणों को त्याग करना चाहिए। उसके बाद सद्गुणों की प्राप्ति करनी चाहिए। गन्दे पात्र में अच्छी चीज नहीं डाली जाती है। हमें उल्लू की गति अर्थात् अज्ञानता को छोड़ देना चाहिए। भेड़ियावत् जो क्रोध है उसे छोड़ देना चाहिए। कुत्ते का स्वजाति द्रोह, चापलूसी, अपने वमन को चाटना इन सभी दोषों को छोड़ देना चाहिए। जो बात हम कहें उससे पलट ना जाए। गरूड़ की तरह घमण्डी नहीं होना चाहिए। हमारे अन्दर में पर्याप्त मात्रा में घमण्ड होता है। गिद्ध की तरह अति लोभ को भी हमें त्याग देना चाहिए। धन-सम्पत्ति पत्नी, पुत्र आदि को जो मेरा नहीं है उसे अपना मान लेते हैं।

११ब्रह्मचारी चन्द्रदेव ने सर्वप्रथम संस्कृत में अपना व्याख्यान किया तथा बाद में उसका हिन्दी अनुवाद बताया। उनके अनुसार जीवन में गतिशीलता होनी चाहिए। गति ही हमारे जीवन को आगे बढ़ाने में सहयोग करती है। वैदिक वाङ्मय में सर्वत्र जीवन दर्शन की चर्चा है। इस में लौकिक जीवन के साथ-साथ पारलौकिक जीवन की भी चर्चा है। परोपकार करने से ही अपना स्वार्थ भी सिद्ध होता है। हमें सज्जनों के निकट जाने में रुचि होनी चाहिए। जो मनुष्य परोपकारी, दयालु, अपने स्वार्थ को छोड़कर दूसरे का उपकार करने वाले हैं। उन्हीं का जीवन जीवन है। हमें अपने जीवन में किसी उपलब्धि की प्राप्ति पर उसमें अधिक लोभ भी नहीं करना चाहिए।

ब्रह्मचारी अभिषेक ने बताया कि ईश्वर को जान लेने पर, अनुभव कर लेने पर हम किसी प्रकार के पाप कर्मों को नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए एक गुरु जी ने शिष्यों की परीक्षा के लिए उन्हें एक एक कबूतर दिया और कहा कि जाओ इन्हें एकान्त में जाकर मार दो। एक शिष्य गया और एकान्त में उसने उसकी गर्दन मरोड़ दी। दूसरे ने सोचा कि ईश्वर हमें देख रहा है। इसलिए वह वापस चला आया। अर्थात् जब हम ईश्वर को सर्वत्र व्यापक मानेंगे तो हम कोई भी पाप कर्म नहीं करेंगे। तृष्णा क्षय से जो होने वाला सुख है वह लौकिक सुख से १५ गुना अधिक है। ईश्वर को जान लेने पर ही सकामता भी हट जाती है। इसलिए हमें ईश्वर भक्ति करनी चाहिए।

सभा मन्त्री मुनि सत्यजित् ने बताया कि लक्ष्य ऊंचा रखना लाभदायक है, हानियां वहाँ भी दिखती हैं। नीचा लक्ष्य रखने में भी लाभ और हानियां दिखती हैं, परन्तु वह लक्ष्य बनाकर व्यक्ति यदि अपना स्वास्थ्य खराब कर ले, दूसरों से बहुत सहयोग ले, किसी के साथ व्यवहार ना रखे। १६, १६ घण्टे पढ़ रहे हैं, ना सोने का समय, ना भोजन का समय ना परिवार के लिए समय न अन्य गतिविधियाँ करता है। लगातार घण्टों कम्प्यूटर पर बैठे-बैठे अपनी गर्दन, कमर खराब कर लेता है। पाचन ठीक नहीं होता ५/१० साल लगाकर किसी बड़े पद को प्राप्त कर लेता है। यह तो ऐसा है कि कोई व्यक्ति पतली और ऊंची दीवार बनाता है, वह कभी भी गिर सकता है। वास्तव में ऐसे लक्ष्य, लक्ष्य नहीं साधन हैं। हम इसमें केवल स्वयं को केंद्र में रखते हैं। हमें मोटी दीवार बनानी चाहिए भले ही ऊंची कम हो। ऊंचा या नीचा लक्ष्य नहीं बल्कि उचित और अनुचित भी देखा जाता है। हमारे ऋषियों ने परमात्मा की प्राप्ति को अन्तिम लक्ष्य बताया है।

सभा के संरक्षक श्री डॉ सुरेन्द्र कुमार ने बताया कि साधारण मनुष्य भी ईश्वर की भक्ति कैसे कर सकता है।

जो ईश्वर को मानता है वह आस्तिक कहलाता है। वह चार पदार्थों पर विश्वास करता है। जीवात्मा, प्रकृति, कर्मफल व्यवस्था और पुनर्जन्म। जो व्यक्ति ईश्वर में स'चा विश्वास रखता है तो ईश्वर की ओर से उसकी आत्मा में प्रेरणा मिलती है। जब भी वह कोई कार्य करता है तो गलत काम करने पर उसे भय शंका लज्जा तथा अच्छे काम करने पर उत्साह प्रेरणा निर्भयता आदि की अनुभूति होती है। यदि वह उन अनुभूतियों को समझ कर वैसा ही काम करे तो वह जीवन में और आगे बढ़ जाता है। तुम्हारी आत्मा में एक शक्ति बैठी रहती है। वह परमात्मा हमेशा निरीक्षण करता रहता है। कोई गलत कार्य करने पर वह हमें दण्डित करता है। ऐसा मानकर व्यक्ति अपने जीवन को शुभ कर्मों में लगाता है। इतना बड़ा रूस देश का विखण्डन अर्थात् टुकड़े-टुकड़े होकर के १४ देशों में बँट जाना। उसका कारण ढूंढा गया तो वहाँ पता लगा कि नास्तिकता के कारण ऐसा हुआ। लगभग १८ देश वामपंथी, कम्युनिस्ट हैं। ईश्वर पर विश्वास नहीं करते। इसके कारण नैतिकता, कर्त्तव्य पालन, मर्यादा, दूसरों के सहयोग की भावना, आर्थिक प्रबन्धन आदि दुर्बल हो जाते हैं।

स्वामी सच्चिदानन्द ने बताया कि जब महर्षि धन्वन्तरी जी ने शरीर के रोगों के लिए शास्त्र लिखा, औषधियां बताईं तब लोगों ने उनसे पूछा कि मानसिक रोगों के लिए क्या करना चाहिए? तब उन्होंने बताया कि ओम् नाम का स्मरण ऐसी औषधि है कि जो सभी रोगों को नष्ट कर देती है। यह सत्य है। इसे तीन बार कहा। कभी-कभी हमारे मन में आता है कि हम ईश्वर की भक्ति क्यों करें? क्या ईश्वर भक्ति बस यही विषय है? अन्य विषय नहीं है? परन्तु जब व्यक्ति आध्यात्मिक होता है तब वह धार्मिक होता है और सभी पापों से बच जाता है और इससे वह सुखी रहता है। जीवन में सुख चाहते हो तो प्रभु की भक्ति करो। सुख साधन से नहीं साधना से मिलता है। बाहर से व्यक्ति दु:खी लगता है पर अन्दर से मालामाल होता है। कोई व्यक्ति बाहर से मालामाल दिखता है पर अंदर से कंगाल होता है। ईश्वर का एक नाम चित्रगुप्त है। वह गुप्त रूप से हमारा चित्र खींचता है अर्थात् हमारे सभी क्रियाकलापों को देख, सुन, जान रहा है।

श्री सन्त हृदयराम व डॉ. धर्मवीर द्वारा जीव सेवा समिति एवं परोपकारिणी सभा के संयुक्त तत्वाधान में पिछले ३३वर्षों से वृष्टियज्ञ ऋषि उद्यान की पवित्र यज्ञशाला में सतत् चला आ रहा है। इस बार ३०जून से ४०वां वृष्टियज्ञ का प्रारम्भ किया गया। यह वृष्टियज्ञ लगभग श्रावण पूर्णिमा तक चलेगा। सुबह ५:१५ बजे से ९:१५ तक गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के द्वारा यज्ञ करवाया जाता है तथा जीव सेवा समिति के सदस्यों के द्वारा सपरिवार आकर यज्ञ किया जाता है। सन्त हृदयराम जी महाराज पुष्कर में रहते थे। जब यहाँ अकाल पड़ा तो मनुष्यों के खाने के लिए तो कुछ व्यवस्था हो गई। साथ ही पशु-पक्षियों के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी तब उन्होंने जगह-जगह पशुओं-पक्षियों के लिए भी खाने-पीने की व्यवस्था करवाई। आर्यसमाज का यज्ञ उन्हें पसन्द आया और वह डॉ. धर्मवीर से मिले, उसके बाद यह प्रारम्भ किया गया। अभी भी बहुत से राज्यों में जीव सेवा समिति के द्वारा चिकित्सालय सुविधाएं, प्याऊ आदि की व्यवस्थाएं सतत् चल रही हैं।

परोपकारिणी सभा के द्वारा समान नागरिक संहिता के विषय में सभा के सदस्यों व आर्यजगत् के विद्वानों के द्वारा ९ जुलाई को एक संगोष्ठी रखी गई। यह सुबह ९:३० से १२:०० बजे दोपहर २.३० से ५:०० बजे एवं रात्रि को ८:०० से ९:३० तक रखी गई। इसमें सभा के संरक्षक डॉ. सुरेन्द्र कुमार, मुनि सत्यजित्, डॉ. वेदपाल, श्री सज्जनसिंह कोठारी, श्री कन्हैयालाल, श्री ओम्मुनि सभा प्रधान श्री सत्यानन्द, श्री सुभाष नवाल, श्री जयसिंह गहलोत तथा अन्य विद्वानों में आचार्या सूर्या देवी, स्वामी ब्रह्मविदानन्द, आचार्य श्री रविन्द्र, आचार्य श्री भद्रकाम वर्णी, श्री शत्रुञ्जय, श्री नरेश धीमान, आचार्य कर्मवीर, मुनि ऋतमा, श्री प्रभाकर व अन्य माननीय विद्वानों ने अपना-अपना विचार रखा। इन विचारों के उपरान्त जो निर्णय हुआ है। उसे विधि आयोग के पास भेजा जाएगा। कुछ लोग ऑनलाइन गूगल मीट के माध्यम से अपना विचार रख व सुन रहे थे। श्री दीपक के द्वारा इसका सीधा प्रसारण यूट्यूब पर भी किया जा रहा था। आप इसे परोपकारिणी सभा के यूट्यूब चैनल पर देख सकते हैं।

परोपकारिणी सभा एवं अजमेर योगासन स्पोटर्स एसोसिएशन के संयुक्त तत्त्वावधान में अजमेर जिला स्तरीय योगासन प्रतियोगिता १, २, ३ सितंबर २०२३ को सम्पन्न

योगासन भारत (नेशनल योगासन स्पोर्ट्स फेडरेशन) के अन्तर्गत अजमेर योगासन स्पोटर्स एसोसिएशन द्वारा जिला स्तरीय योगासन प्रतियोगिता का आयोजन १, २, ३ सितंबर २०२३ को अजमेर में किया गया, जिला सचिव श्री सुनील जोशी ने बताया कि योगासन भारत योग के क्षेत्र में भारत सरकार आयुष मंत्रालय द्वारा मान्यता प्राप्त महासंघ है, योगासन भारत से सम्बन्ध राजस्थान योगासन स्पोर्ट्स एसोसिएशन के तत्वाधान में जिला स्तरीय योगासन प्रतियोगिता योगासन भारत के नवीनतम कोड आफ प्वाइंट्स नियमों के अनुसार संपन्न होगी, उन्होंने बताया कि प्रतियोगिता का उद्घाटन १ सितंबर २०२३ को ऋषि उद्यान स्थित योग भवन में हुआ।

प्रतियोगिता में ट्रेडिशनल, आर्टिस्टिक सिंगल, आर्टिस्टिक व रिदमिक पेयर इवेंट्स हुए, सीनियर वर्ग ए, बी, व सी में केवल ट्रेडिशनल योगासन स्पर्धाएं ही हुई।

यह प्रतियोगिता विभिन्न वर्गों में कराई गई जिसमें 9 वर्ष से 55 वर्ष तक की पुरुष व महिला आयु वर्ग में हुई।

इस प्रतियोगिता की कार्यकारिणी की बैठक में यतीन्द्र शास्त्री, कमलेश पुरोहित, नीरज चौधरी, अंकित रंगा, वीरेंद्र शर्मा, करणवीर सिंह, सुशांत ओझा, प्रिया राजावत, देवांशु ओझा, भागवत चौधरी, आदि ऑफिशियल व टेक्निकल टीम उपस्थित रहे।

अजमेर जिला स्तरीय योगासन प्रतियोगिता का उदघाटन १ सितम्बर २०२३ को हुआ-

योग को खेल के साथ जीवन में भी आत्मसात करना चाहिए- आचार्य कर्मवीर

जिला स्तरीय योगासन प्रतियोगिता का १ सितंबर २०२३को ऋषि उद्यान अजमेर में यज्ञ व वैदिक प्रवचन के साथ उद्घाटन किया गया।

प्रतियोगिता में अजमेर, ब्यावर, किशनगढ, पुष्कर, के लगभग ४० स्कूलों के ढाई सौ से अधिक प्रतिभागियों ने भाग लिया।

प्रतियोगिता में १ सितम्बर को ट्रेडिशनल इवेंट हुए, जिसमें सब जूनियर, जूनियर, सीनियर, तथा सीनियर वर्ग ए, बी, व सी वर्ग संपन्न हुए।

इस प्रतियोगिता के उद्घाटन सत्र में आचार्य कर्मवीर, श्री सुबोध जैन, सुभाष काबरा, श्री रमेश, चंद्रा अग्रवाल, श्री कन्हैयालाल, श्री राजेश कश्यप, भगवान जेठानी, अनिल पटेल आदि भामाशाह उपस्थित रहे।

२ सितंबर २०२३ को ऋषि उद्यान अजमेर में प्रतिभागियों ने संगीत के साथ योगासन के मुद्राओं की प्रस्तुति दी। जिसमें प्रतिभागियों ने आर्टिस्टिक सिंगल, आर्टिस्टिक पेयर, रिदमिक पेयर मैं दमखम दिखाया।

इस प्रतियोगिता में कमलेश पुरोहित, नीरज चौधरी, वीरेंद्र शर्मा, अंकित रंगा, करणवीर सिंह, देवांशु ओझा, भगवत चौधरी, आदि कई जज में अपनी सेवाएं प्रदान की।

अजमेर योगासन स्पोर्ट्स एसोसिएशन एवं परोपकारिणी सभा के संयुक्त तत्वाधान में जिला स्तरीय योगासन प्रतियोगिता का ३ सितंबर २०२३ को ऋषि उद्यान अजमेर में पुरस्कार वितरण के साथ संपन्न हुआ।

मुख्य अतिथि- सी. आर. मीणा- संभागीय आयुक्त, प्रवीना कुलकर्णी, रमेश अग्रवाल, संजीव गुप्ता, राजेश कश्यप, गोपेश दुबे, कन्हैयालाल लालवानी, यतेंद्र शास्त्री, सुशांत ओझा।

आयोजक मंडल- सुनील जोशी- जिला सचिव, नीरज कुमार- चैम्पियनशिप डायरेक्टर, कमलेश पुरोहित- ऑर्गेनाइजेशन डायरेक्टर, अंकित रंगा-टेक्निकल डायरेक्टर, वीरेंद्र शर्मा - कम्पटीशन चीफ जज।

विजेता प्रतिभागी- महिला वर्ग- पायल टाक,

तमन्ना टाक, योगिता रावत, भारती, तन्वी, अंशिका, टिशा पटेल, अनुष्का टाक, ममता चौधरी, साक्षी, जिया, शानवी थापा, दीक्षिता शर्मा, गोरनवी, निधि, नव्या, पहल, डिंपल, वंशिका, माही, आकांक्षा, खुशबू, अनुप्रिया, प्रियंगी, यशिका, रिया, शुभांगी, आध्या, प्रिशा, कायशा, अभीश्री, आरणा, अभिलाषा, युवाना,

विजेता प्रतिभागी- पुरुष वर्ग- अर्जुन परमार, गौतम सवासिया, वरुण पटेल, करण,लव प्रताप, दिव्यांशु, अभिनव, यश, लैविश, इशात, शुभम, ऋतिक, भावेश, वेदांत, तर्श, अद्वित, आर्यन, अनुकूल, शब्द, हिमांग, माधवादित्य, सम्यक, रेवान्त, युग, भगवान, अथर्व, ध्रुव सिंह, युवराज, चित्रांश, विवान, कार्तिक,

निर्णायक कमेटी- देवांशु ओझा, प्रिया राजावत, भगवत चौधरी, रेणुका कश्यप, कुसुम राजावत, सीमा जेठानंदानी, प्रज्ञा पांडे, निर्मला केवलरामानी, मुस्कान मोरवाल, सुशील शर्मा, प्रणव प्रजापति, रितिका शर्मा।

टेक्निकल कमेटी- करणवीर सिंह राठौड़, परमवीर सिंह, दीपा टीलवानी।

परोपकारी ग्राहकों हेतु आवश्यक सूचना

परोपकारी के अनेक सदस्यों की यह शिकायत रहती है कि उन्हें पत्रिका प्राप्त नहीं हो रही है। रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका भेजने पर डाक व्यय बढ़ जाता है। सदस्यों से निवेदन है कि जो रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं, वह निम्नानुसार डाक व्यय सभा के खाते में अग्रिम रूप से जमा करके कार्यालय को सूचित कर दें। रजिस्टर्ड डाक का व्यय (पत्रिका शुल्क के अतिरिक्त) निम्न प्रकार है-

१. प्रत्येक अंक (वर्ष भर २४ अंक) रजिस्टर्ड डाक से मंगाने पर - डाक व्यय - १०००/-

२. एक मास के दो अंक- एक साथ मंगाने पर वार्षिक - डाक व्यय - ५००/-

३. एक वर्ष के २४ अंक- एक साथ मंगाने पर - डाक व्यय - १००/-

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्त्तें। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है।

(सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास ३)

।। ओ३म् ।।

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
१४० वाँ ऋषि बलिदान समारोह

कार्तिक शुक्ल चतुर्थी से षष्ठी, संवत् २०८० तदनुसार

दिनांक १७, १८, १९ नवम्बर २०२३, शुक्र, शनि, रविवार

विराट् व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण के प्रति कृतज्ञता को प्रकट करने का स्वर्णिम-अवसर ऋषि के १४०वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको पुनः प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है। मुख्य कार्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :-

अथर्ववेद पारायण यज्ञ- 'अथर्ववेद पारायण यज्ञ' का आरम्भ मंगलवार १४ नवम्बर से होगा व इसकी पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन १९ नवम्बर को प्रातः १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् होंगे।

ध्वजारोहण व उद्घाटन- बलिदान समारोह का विधिवत् उद्घाटन ओ३म् ध्वजा के आरोहण व प्रधान जी के उद्बोधन के साथ किया जायेगा।

उपदेश-प्रवचन-भजन- प्रातः यज्ञ के बाद आध्यात्मिक प्रवचन होंगे। पूर्वाह्न, अपराह्न व रात्रि में आयोजित विभिन्न प्रासंगिक विषयों वाले सत्रों में आर्यजगत् के विशिष्ट संन्यासियों, विद्वानों, आचार्यों के विचार सुनने को मिलेंगे। साथ ही भजनोपदेशकों के मधुर भजनों का आनन्द भी प्राप्त होगा।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी वेदगोष्ठी साथ में होगी। परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान स्व. श्री गजानन्द आर्य की स्मृति में परोपकारिणी सभा, अजमेर व महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर एवं अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली के संयुक्त तत्त्वावधान में वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **महर्षि दयानन्द का समाजिक चिन्तन व वेद।** जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे ३१ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। १७, १८, १९ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

वानप्रस्थ एवं संन्यास दीक्षा- इस अवसर पर शुक्र-शनि दिनाङ्क १७ व १८ को दिन में क्रमशः वानप्रस्थ व संन्यास संस्कार भी कराया जायेगा। वानप्रस्थ व संन्यास दीक्षा लेने के इच्छुक व्यक्ति ३१ अक्टूबर तक अपना परिचय आदि जीवनवृत्त परोपकारिणी सभा को भिजवा देवें। उन पर विचार के बाद इसके योग्य व्यक्तियों को वानप्रस्थ या संन्यास दीक्षा देने का निश्चय किया जायेगा।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी एक वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। १८ नवम्बर को परीक्षा एवं १९ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय ३१ अक्टूबर, २०२३ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान-समारोह होगा। जिसमें १७ विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा। इनके विशेष योगदान को बताते हुए इनका परिचय भी दिया जायेगा।

आर्यवीर दल व्यायाम प्रदर्शन- इस समारोह में शनिवार दिनाङ्क १८ को सायंकाल आर्यवीरों व ब्रह्मचारियों द्वारा व्यायाम-आसन आदि का भव्य प्रदर्शन किया जायेगा।

आर्यसाहित्य व यज्ञादि उपकरणों का विक्रय- इस अवसर पर परोपकारिणी सभा के अतिरिक्त भी अनेक पुस्तक प्रकाशकों-विक्रेताओं की पुस्तकें, यज्ञ-पात्र-ध्वजा आदि, आयुर्वेदिक औषधियों की दुकानें लगेंगी। इनके क्रय का अवसर प्राप्त होगा।

ऋषि लंगर- बलिदान समारोह में पधारे सभी श्रद्धालुओं के लिए ऋषि उद्यान में परोपकारिणी सभा द्वारा पौष्टिक, स्वादिष्ट प्रातराश एवं दो समय के भोजन की व्यवस्था की गई है।

नवम्बर के आरम्भ में अजमेर में हल्की ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १४०वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आर्यजगत् के अनेक प्रसिद्ध संन्यासी, मुनि, विद्वान्, आचार्य, भजनोपदेशक आदि पधार रहे हैं।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

www.paropkarinisabha.com email : psabhaa@gmail.com

सत्यानन्द आर्य **मुनि सत्यजित्**

प्रधान **मन्त्री**

गुरुकुल प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषिउद्यान, अजमेर में संस्कृत भाषा, पाणिनीय व्याकरण, वैदिक दर्शन, उपनिषदादि के अध्ययन हेतु प्रवेश आरम्भ किये गए हैं। इन्हें पढ़कर वैदिक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक बन सकते हैं। कम से कम दसवीं कक्षा उत्तीर्ण १६ वर्ष से बड़े युवकों को प्रवेश मिल सकता है। प्रवेशार्थी को पहले ३ माह का अस्थाई प्रवेश दिया जाएगा। इस काल में अध्ययन व अनुशासन में सन्तोषजनक स्थिति वाले युवकों को ही स्थाई प्रवेश दिया जाएगा। सम्पूर्ण व्यवस्था निःशुल्क है। गुरुकुल में अध्ययन के काल में किसी भी बाहर की परीक्षा को नहीं दिलवाया जाएगा, न उसकी अनुमति रहेगी। प्रवेश व अधिक जानकारी के लिए-

चलभाष : ७०१४४४७०४० पर सम्पर्क कर सकते हैं। सम्पर्क समय- अपराह्न ३.३० से ४.३०।

वेदगोष्ठी-२०२३

(कार्त्तिक शुक्ल चतुर्थी से षष्ठी, संवत् २०८० तदनुसार १७, १८ एवं १९ नवम्बर, २०२३)

मान्यवर, सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध-पत्र **परोपकारी** व वेदपीठ की शोध-पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते हैं, वे भी इनसे लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। कोविड् के २ वर्षों को छोड़ गत ३५ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। इस बार वेदगोष्ठी के लिए निर्धारित विषय है:-

महर्षि दयानन्द का सामाजिक चिन्तन व वेद

उपशीर्षक :

०१. समाज की अवधारणा ०२. वैदिक समाज का स्वरूप

०३. समाज की आवश्यकता/अपरिहार्यता ०४. समाज का आरम्भ व विकास

०५. सामाजिक उन्नति का तात्पर्य ०६. जाति प्रथा व वर्ण

०७. समाज की वैदिकता

०८. अन्तर्जातीय सम्बन्ध व वर्ण संकरता ०९. विभिन्न आधुनिक व्यवसायों का भिन्न-भिन्न वर्णों में समावेश का निर्णय

१०. दलितों के प्रति समाज का कर्त्तव्य ११. महिलाओं के प्रति समाज के विशेष कर्त्तव्य, नियम-व्यवस्था

१२. विभिन्न वर्ण व आश्रम के व्यक्तियों के समान-असमान वर्ण व आश्रम के व्यक्तियों से व्यवहार की वेदानुकूल रीति।

इस विषय में महर्षि दयानन्द द्वारा जो प्रतिपादित किया गया है, उसके प्रमाणों का संग्रह और सिद्धान्तों की पुष्टि हो, यह इस गोष्ठी का उद्देश्य है। इसी आधार पर विषय का वर्गीकरण भी किया गया है। आप अपने विस्तृत अध्ययन के आधार पर इस विषय को प्रमाणों से पुष्ट करेंगे, ऐसा विश्वास है।

आप विद्वान् हैं। अत: आपसे निवेदन है कि गोष्ठी हेतु अपने विचार प्रेषित करें। आप कौन से उपविषयों पर प्रकाश डालने की इच्छा रखते हैं इसकी सूचना लौटती डाक से भेजने की कृपा करें। प्राप्त उत्कृष्ट लेख परोपकारी पत्रिका व पुस्तकाकार में प्रकाशित किए जाते हैं। प्राय: गोष्ठियों के लेख प्रकाशित हो चुके हैं। आप जिस विषय पर लिखना चाहें उसकी सूचना गोष्ठी के संयोजक को देने की कृपा करें। पिष्टपेषण न हो तथा विषय का सर्वांगीण विवेचन हो सके इसके लिए ऐसा करना आवश्यक है। लेख टाइप किए गए १० पृष्ठ से अधिक न हो। लेख में प्रस्तुत विचारों एवं तथ्यों के लिए महर्षि कृत ग्रन्थ व भाष्यों के प्रमाण अवश्य उद्धृत करें, प्रमाणों का पूरा पता दें। निबन्धों में आये सन्दर्भ ग्रन्थ एवं अन्य सामग्री की सूची शोध की स्पष्टता के लिए आवश्यक है। यदि आपके पास कम्प्यूटर की व्यवस्था है, तो अपना लेख, खुला (श्क्षद्गठ्ठ ह्लद्ग्यद्ग) हुआ ई-मेल से भेजें। पत्र/निबन्ध की भाषा हिन्दी या संस्कृत हो सकती है। लेख स्पष्ट रूप से

कागज के एक ओर टाइप किया अथवा सुपाठ्य रूप में लिखा होना चाहिए। वेद गोष्ठी में पढ़े गये सर्वश्रेष्ठ तीन शोध पत्र प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कृत किये जायेंगे। निर्णायकों का निर्णय अन्तिम व सर्वमान्य होगा।

आपका सहयोग ही गोष्ठी की सफलता का आधार है। आपके सुझाव एवं मार्गदर्शन की प्रतीक्षा रहेगी। आप यदि किसी कारण से लेख लिखने में असमर्थ हों तो भी सूचित करने का कष्ट करें।

गोष्ठी में शोधपत्र प्रस्तुत करने के इच्छुक विद्वान्/शोधार्थी कृपया दिनांक ३१-१०-२०२३ तक अपने शोधपत्र (सार-संक्षेप सहित) आचार्य शक्तिनन्दन-९४९०४९२४९४ संयोजक, वेदगोष्ठी, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर को प्रेषित कर दें।

सादर।

उत्तराकांक्षी

मुनि सत्यजित्

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर।

पिछली वेद गोष्ठियों में अब तक निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जा चुका है

०१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	१९८८	१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	२००६
०२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग।	१९८९	२०. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है	२००७
०३. अथर्ववेद समस्या और समाधान।	१९९०	२१. वैदिक समाज विज्ञान	२००८
०४. वेद और विदेशी विद्वान्।	१९९१	२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	२००९
०५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप।	१९९२	२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	२०१०
०६. वेदों के दार्शनिक विचार।	१९९३	२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	२०११
०७. सोम का वैदिक स्वरूप।	१९९४	२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्य: वैदिक परिप्रेक्ष्य	२०१२
०८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान।	१९९५	२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	२०१३
०९. वैदिक समाज व्यवस्था।	१९९६	२७. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०१४
१०. वेद और राष्ट्र।	१९९७	२८. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०१५
११. वेद और विज्ञान।	१९९८	२९. दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	२०१६
१२. वेद और ज्योतिष।	१९९९	३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	२०१७
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	२०००	३१. षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द	२०१८
१४. वेद और निरुक्त	२००१	३२. महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद	२०२१
१५. वेद में इतिहास नहीं	२००२	३३. उपनिषद् वाङ्मय में ईश्वर चिन्तन	२०२२
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	२००३		
१७. वेद में शिल्प	२००४		
१८. वेदों में अध्यात्म	२००५		

(परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित)

योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर

(स्वामी विष्वङ्जी परिव्राजक के सान्निध्य में)

संवत् २०८०, कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा से अष्टमी तक, तदनुसार २९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर २०२३

इस योग-साधना शिविर में योग सम्बन्धी विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। **अन्य अध्यापक** - आचार्य सोमदेव जी, आचार्य कर्मवीर जी।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक शिविरार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
३. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
४. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
५. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
६. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
७. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
८. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।
९. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२९४८६९८, मो. ९३१४३९४४२१) से सम्पर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार अतिरिक्त भुगतान से की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गम्भीर रोग हो, तो कृपया शिविर

में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क २००० रु. मात्र जमा करना होगा। पृथक् कक्ष का शुल्क २००० रु. अतिरिक्त देय है। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारम्भ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है, क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर

दूरभाष : ०१४५-२९४८६९८, मो.नं. ९३१४३९४४२१

– : मार्ग : –

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम

परोपकारिणी सभा, अजमेर

(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम

भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

10158172715

IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI

वैचारिक क्रान्ति के लिये सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में आयोजित संस्कार विधि संवाद गोष्ठी के दृश्य। सप्त सदस्यीय विद्वद् समिति आचार्य उदयन (प्रधानाचार्य - सान्दीपनि वेदगुरुकुलम् - मेदक, तेलंगाणा) डॉ. ज्वलन्त कुमार , मुनि सत्यजित् (मन्त्री - परोपकारिणी सभा) , डॉ. सुरेन्द्र कुमार (संरक्षक - परोपकारिणी सभा), आचार्य विरजानन्द (सदस्य - परोपकारिणी सभा), आचार्य विष्णुमित्र व डॉ. वेदपाल (सम्पादक - परोपकारी पत्रिका)

आर जे/ए जे/80/2021-2023 तक प्रेषण : ३० सितम्बर २०२३ आर.एन.आई. ३९५९/५९

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा आयोजित

भव्य ऋषि मेला

१७, १८, १९ नवम्बर २०२३

सादर आमन्त्रण

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज,

अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,